कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास
को समर्पित

वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

वर्ष 53 अंक : 10 अगस्त 2007 मूल्य : 10 रुपये

भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र

ग्राम पंचायत से संसद तक प्रजातंत्र

केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री द्वारा राधाकान्त भारती की पुस्तक का लोकार्पण

श्री राधाकान्त भारती द्वारा लिखित पुस्तक 'कहावतों की कहानियां' का लोकार्पण करते हुए डॉक्टर रघुवंश प्रसाद सिंह

केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्री डॉ. रघुवंश प्रसाद सिंह ने श्री राधाकान्त भारती की नई पुस्तक 'कहावतों की कहानियां' का लोकार्पण किया। इस अवसर पर बोलते हुए डॉ. सिंह ने हिन्दी और भारतीय भाषाओं की अभिव्यक्ति क्षमता को श्रेष्ठ बताया। उन्होंने भाषा में कहावतों के महत्व की श्रेष्ठता बता कर श्री भारती के लेखन प्रयास की सराहना की। लोकार्पण के लिए पुस्तक प्रस्तुत करते हुए पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि ने कहावतों पर अनुसंधान तथा लेखन की आवश्यकता पर बल दिया।

समारोह की अध्यक्षता पूर्व राजदूत तथा वरिष्ठ लेखक डॉ. गौरी शंकर राजहंस ने की। इन्होंने ग्राम विकास के क्षेत्र में मंत्री महोदय द्वारा किए जा रहे कार्यों की सराहना की तथा धरती से जुड़ा हुआ एक ऐसा प्रखर राज नेता बताया जो साहित्य में भी रुचि रखता हो। डॉ. जी.एस. राजहंस ने लेखक राधाकान्त भारती से ऐसे महत्वपूर्ण लेखन कार्य को आगे जारी रखने का अनुरोध किया।

नई दिल्ली के कृषि भवन में आयोजित समारोह में अनेक सुप्रसिद्ध साहित्यकार, पत्रकार तथा विशिष्ट व्यक्ति उपस्थित थे जिनमें वरिष्ठ पत्रकार अरविन्द घोष, प्रेम कपूर, मलयालम अनुवादक हिमांशु चतुर्वेदी, दिल्ली विश्वविद्यालय की डॉ. नूतन भारती तथा विदेश मंत्रालय के डॉ. श्री प्रकाश शुक्ल उल्लेखनीय हैं। इस लोकार्पण समारोह का संयोजन प्रकाशक प्रभात कुमार के सहयोग से मंत्रालय के श्री के.के. ध्यानी ने किया।

वर्ष : 53 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 48
श्रावण–भाद्रपद 1929, अगस्त 2007

प्रभारी सम्पादक
कैलाश चन्द मीना
संपादकीय पत्र–व्यवहार
संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
एन.सी. मजुमदार

व्यापार प्रबंधक
जगदीश प्रसाद
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

आवरण एवं सज्जा
संजीव सिंह और रजनी दवे

मूल्य एक प्रति : 10 रुपये
वार्षिक शुल्क : 100 रुपये
द्विवार्षिक : 180 रुपये
त्रिवार्षिक : 250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)
पड़ोसी देशों में : 550 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में : 750 रुपये (वार्षिक)

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

कुरुक्षेत्र

इस अंक में

● पंचायती राज की बदलती तस्वीर	आशुतोष शुक्ल	5
● पंचायती राज : यथार्थ के आइने में	तीर्थ प्रकाश व संतोष कुमार सिंह	10
● पंचायती राज और महिला सशक्तिकरण	सुभाष सेतिया	16
● पंचायतों पर मंडराते खतरे	वेद प्रकाश अरोड़ा	19
● पंचायती राज का भविष्य	सुरेन्द्र कटारिया	23
● ग्रामीण विकास में पंचायती राज की भूमिका	मनीष कुमार	27
● नाबार्ड : कृषि साख के 25 वर्ष	दुष्यन्त सिंह	31
● कृषि का उदभव और विकास	रमेश कुमार सिंह	34
● सुगंधित धान : मुनाफे की खेती	वीरेन्द्र कुमार	38
● भारत के आर्थिक विकास में कृषि की भूमिका	अनिल प्रताप सिंह	42
● मानसून की माया : कहीं धूप–कहीं छाया	राधाकांत भारती	45
● जामुन एक उपयोगी भारतीय फल	ईशानदेव	47

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

संपादकीय

हमारे देश में पंचायतों का अस्तित्व प्राचीन काल से ही रहा है । इन पंचायतों के निर्णय सभी को मान्य होते थे । यह परंपरा मुगल काल तक देखी जा सकती है । ब्रिटिश काल में पंचायतें अवश्य राज व्यवस्था के हाशिये पर चली गई थी, जिन्हें लार्ड रिपन ने पुनर्जीवित करने का प्रयास किया । स्वतंत्रता के पश्चात जब गांवों के विकास की बात आई तो गांधी जी ने पंचायती राज व्यवस्था का सुझाव दिया और इस काम को मूर्तरूप देने के लिए 2 अक्तूबर, 1959 को राजस्थान के नागौर जिले में तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने आधुनिक त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था का दीप प्रज्ज्वलित किया ।

स्वतंत्र भारत में पंचायती राज संस्थाओं ने राजनीतिक दृष्टि से लोकतंत्र के बीज बोये हैं और आम लोगों को जागरूक बनाया है । सामाजिक दृष्टि से समाज में एक नया नेतृत्व उभरा है जिससे समाज में सामाजिक परिवर्तन और सुधारों की मांग होने लगी है। सदियों से शोषित–दलित वर्गों में आशा की नई किरण जागी है । प्रशासनिक दृष्टि से आम जनता और लोक सेवकों के मध्य विद्यमान खाई अब पटने लगी है । गांवों की दिन–प्रतिदिन की विभिन्न समस्याओं का निदान हो रहा है । अब जन प्रतिनिधि भी समझने लगे हैं कि गांवों के विकास के बिना सत्ता में आना मुश्किल है ।

प्रजातांत्रिक व्यवस्था का संचालन केंद्र में बैठे चंद लोगों द्वारा नहीं बल्कि ग्रामीणजन द्वारा होना चाहिए । अब जनसाधारण में इतनी जागृति लानी होगी कि वह सत्ता पर नियंत्रण भलीभांति कर सके। भारत चंद शहरों में नहीं बल्कि गांवों में बसता है । आजादी नीचे से शुरू होनी चाहिए ऊपर से नहीं। गांवों का सारा इंतजाम गांवों को अपने हाथों में लेना होगा । आर्थिक विषमता मिटानी होगी । पहले दो चीजें थी राजा और प्रजा । अब दो चीजें नहीं रही हैं क्योंकि राजा ही प्रजा हो गया और प्रजा ही राजा हो गई है । ग्राम पंचायत से लेकर संसद तक फैले इस जनतंत्र में अनुसूचित जाति, जनजाति तथा महिलाओं को सत्ता में भागीदार बनाकर आज विभिन्न वर्गों की महिलाएं पंच–सरपंच तथा जिला प्रमुख के पदों पर बैठी हुई हैं । सत्ता के इस विकेन्द्रीकरण का श्रेय पंचायती राज व्यवस्था को ही जाता है ।

जाहिर है कि राजा और प्रजा के बदलते अर्थों ने लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण और स्थानीय स्वशासन के नए अध्याय लिखे हैं । फिर भी पंचायती राज की भावना को साकार रूप दिए जाने के लिए समाज के पिछड़े और वंचित वर्गों की प्रशासन में भागीदारी आवश्यक है, गांवों तक शिक्षा का दीपक जलाना जरूरी है और ग्रामवासियों को जागरुक बनाना अनिवार्य है । ऐसा करके ही पंचायती राज प्रणाली अपने लक्ष्यों को हासिल कर सकती है । गांवों का वास्तविक विकास हो सकता है और राष्ट्रपिता गांधी के सपने साकार हो सकते हैं ।

मत-सम्मत

'पिघलते ग्लेशियर और घटता जल स्तर' नामक ज्वलंत, समसामयिक और लोकमहत्व के विषय पर केन्द्रित 'कुरुक्षेत्र' का जून 2007 अंक पढ़ा। जल का अभाव वर्तमान में चिंता का एक गम्भीर विषय है। आशुतोष शुक्ल जी की आवरण कथा 'दस्तक देता जल संकट' पानी के बचाव और पानी से सम्बन्धित सभी आयामों का गहन विश्लेषण करती है। प्रांजल धर जी का लेख 'ताकि ये हरियाली बनी रहे' जानकारियों और विश्लेषणों का अनमोल खजाना है। इसके अतिरिक्त जगनारायण जी का 'गुणों की खान है टमाटर' नामक लेख प्राचीन भारतीय ग्रामीण लोक जीवन शैली की याद दिला देता है। मधुमक्खी पालन व ओजोन परत से संबंधित जानकारियां काफी रोचक व महत्वपूर्ण है। सम्पादकीय को प्रारंभ करके संपादक जी ने सराहनीय व स्वागतयोग्य कार्य किया है।

राहुल द्विवेदी, लखनऊ, (उ.प्र.)

कुरुक्षेत्र का जून अंक 'पिघलते ग्लेशियर घटता जल स्तर' पढ़ा। इस बार के कुरुक्षेत्र के कुछ लेख बड़े क्रांन्तिकारी हैं। इस बार की आवरण कथा 'दस्तक देता जल संकट' ने जल संकट के विभिन्न आयामों पर बखूबी रोशनी डाली है। आशुतोष शुक्ल जी ने जल संचयन के परम्परागत साधनों जैसे तालाब, कुएं, बावड़ी, के समाप्त हो जाने तथा इनसे होने वाले नुकसान पर प्रकाश डालकर मुझ जैसे ग्रामीण व्यक्ति को भी नई–नई जानकारियों और नये–नये उपायों से परिचित कराया। आज जबकि भारत, 2007 को राष्ट्रीय जल वर्ष के रूप में मना रहा है तो कुरुक्षेत्र ने जल संकट का मुद्दा उठाकर अन्य पत्रिकाओं की अपेक्षा पाठकों का ध्यान सच्चे संकट के प्रति कराया।

दुर्गेश कुमार शुक्ल, बस्ती (उ.प्र.)

'पिघलते ग्लेशियर, घटता जलस्तर' नामक चेतावनीपूर्ण शीर्षक से सुसज्जित कुरुक्षेत्र का जून अंक पढ़ा। सचमुच पर्यावरण की पूरी समस्या को आपने बखूबी समेटा है। पूरी पत्रिका एक बार में ही पढ़ने से स्वयं को रोक नहीं पाया। यह अंक प्रतियोगी परिक्षाओं की दृष्टि से भी काफी सराहनीय है। खासकर प्रांजल धर जी का लेख बहुत अंदर तक झकझोरता है। आपने संपादकीय प्रारंभ करके बढ़िया काम किया है क्योंकि बिना संपादकीय के कोई भी अखबार या पत्रिका सूनी–सूनी लगती है। संपादकीय की भाषा सरल, सहज और बोधगम्य है जो काबिले तारीफ है। आशा है, ऐसे ही खूबसूरत अंक आगे भी आते रहेंगे। 'दस्तक देता जल संकट' नामक आशुतोष शुल्क जी का लेख बहुत अच्छा था। इस बार के बेजोड़ अंक के लिए बधाई।

सत्यम कुमार, औरंगाबाद, (बिहार)

जून 2007 का अंक पढ़ा। आज पर्यावरण के रूप में सबसे बड़ी समस्या जल संकट के रूप में है। मनुष्यों ने प्रकृति के साथ ऐसी छेड़–छाड़ की तो आने वाली पीढ़ियां एक–एक बूंद पानी को तरस जाएंगी, पानी न मिलने की वजह से आबादी का एक बड़ा भाग अकाल का शिकार होगा, जैसा कि आपने संपादकीय में और आशुतोष शुक्ल जी ने अपने लेख में इस समस्या के बारे में बहुत ही बेहतर लेखन किया है। अन्य लेखकों का भी प्रयास सराहनीय है। सम्पादकीय लिखकर सूनापन दूर करने के लिए धन्यवाद।

शिवम शौण्डिक, लातेहार, झारखण्ड

कुरुक्षेत्र के जून अंक में 'जल' की समस्या एवं निदान पर इसके परिप्रेक्ष्य के लेखों को पढ़ कर प्रसन्नता हुई। सम्पादकीय ज्ञानवर्द्धक रहा। जल, हवा ये प्राकृतिक चीजें मनुष्य की बेहतरी के लिए है। इनसे ही मानव का जीवन है। इसलिए इसे संजोकर एवं संभालकर रखना श्रेयस्कर होगा। ईशानदेव, सी.जे जुनेजा, अखिलेश आर्येन्दु के लेख सराहनीय रहे।

नीतू पांडेय, दिल्ली

'कुरुक्षेत्र' का पर्यावरण और हरियाली जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों पर केंद्रित जून अंक हस्तगत हुआ। जल के विषय में आपने संपादकीय में बिल्कुल सटीक लिखा है। संपादकीय में उठाए गए प्रश्न लोकमहत्व के हैं एवं उनका हल खोजना हम सभी के लिए बेहद जरूरी है। हरियाली के प्रति जागरूकता का प्रचार–प्रसार करने वाला लेख 'ताकि यह हरियाली बनी रहे' बेहद रोचक है। इसके अतिरिक्त 'ओजोन परत आज की चिंता' नामक लेख मांट्रियल समझौते के बारे में जानकारियां देता है। खूबसूरत और ज्ञानवर्द्धक अंक निकालने के लिए संपादक जी को शुभकामनाएं।

रश्मि निषाद, कानपुर (उ.प्र.)

'मैंने जून 2007 अंक का गहन अध्ययन किया। वास्तव में आने वाले समय में जल संकट विकराल रूप धारण करने को तैयार है। ईशानदेव 'खेती में पानी का बढ़ता अभाव और नई सिंचाई प्रणालियों का विकास' चित्र सहित स्पष्ट करने के लिये धन्यवाद के पात्र हैं। आगे 'पानी के उपयोग के तरीके की जो जानकारी दी गयी, वह बहुमूल्य है। बहुत दिनों के बाद 'सम्पादकीय' पढ़ कर बहुत खुशी हुई। सम्पादक महोदय से अनुरोध है कि 'सम्पादकीय' से उचित मार्गदर्शन देते रहें।

अजय कुमार शर्मा, गिरिडीह, झारखण्ड

आज की सबसे बड़ी समस्या हरियाली और पर्यावरण की है। इसी विषय पर केन्द्रित कुरुक्षेत्र का जून अंक पढ़ा। दूसरे लेखों के अतिरिक्त प्रांजल धर का आलेख बहुत सराहनीय है। प्रांजल धर का यह लेख जितनी खूबसूरती से भारत की पर्यावरणीय विविधता का वर्णन करता है वह बहुत आकर्षक है। इसके अलावा संपादकीय भी बेहद खूबसूरत है।

नीलेश कुमार मीना, जयपुर, राजस्थान,

जल ही जीवन है। इसी विषय पर आशुतोष शुक्ल, प्रांजल धर, मयंक श्रीवास्तव, अरविंद कु. शुक्ल, एवं डी.डी. ओझा के लेख तथ्यों से भरपूर एवं आंखें खोल देने वाले हैं। उम्मीद है कि कुरुक्षेत्र के जून अंक को पढ़कर हर व्यक्ति पानी का मोल जान पाएगा एवं इसके बचाव के लिए कार्य करेगा।

अमृता पांडेय, मुखर्जी नगर, दिल्ली

जल–संकट, पर्यावरण, हरियाली और जैव–विविधता जैसे ज्वलंत और समकालीन विषयों पर आधारित कुरुक्षेत्र का जून अंक पढ़ा। आवरण कथा में आशुतोष शुक्ल जी ने 'वाटर हार्वेस्टिंग' और जल संचयन के तरीकों का उल्लेख किया है जिससे हमें काफी जानकारी मिलती है। डी.डी. ओझा जी का पानी के उपयोग का तरीका बदलने का चार्ट काफी जानकारीपरक है। लेकिन गहन विमर्श, जानकारियों के अपार भंडार और जीवंत धारा–प्रवाह भाषा से सजा हुआ प्रांजल धर का लेख बहुत कुछ सोचने पर विवश कर देता है। बाक्सों में दी गई जानकारियों ने इस अवतरण में चार चांद लगाया है।

निखिल मणि त्रिपाठी, देवरिया (उ.प्र.)

कुरुक्षेत्र का जून अंक वास्तव में पर्यावरण के प्रति सजग होने के लिए पर्याप्त सकारात्मक प्रेरणा प्रदान करता है। 'ताकि यह हरियाली बनी रहे' नामक लेख में प्रांजल धर ने अनेक खूबसूरत उदाहरणों से पर्यावरणीय चेतना विकसित करने के जो तरीके सुझाए हैं, उन पर प्रत्येक व्यक्ति, समाज और व्यवस्था को गौर करना होगा। आज लोग पर्यावरण, जल–संकट या हरियाली जैसे जरूरी मुद्दों के बारे में न जानना ही श्रेष्ठ समझते हैं। जबकि मैं सोचती हूं कि प्रत्येक मनुष्य को पर्यावरण संकट, जल और हरियाली को लेकर सचेत हो जाना चाहिए।

नीलिमा सिंह, रांची, झारखण्ड

जून अंक में कुरुक्षेत्र ने पर्यावरण की सारी समस्याओं पर उचित प्रकाश डाला है। संपादकीय में आपने लिखा है "जब हम जल संरक्षण की बात करते हैं तो निष्कर्ष यही निकलता है कि देशवासियों में जागरूकता की कमी है।" आपने बिल्कुल सही लिखा है क्योंकि भारत की ग्रामीण आबादी अभी भी सजग अथवा जागरूक नहीं हो पाई हैं। इस समस्या का ध्यान सभी को रखना होगा। अंक में मधुमक्खी पालन के बारे में दी गई जानकारी अच्छी है।

प्रांजल धर का आलेख 'ताकि यह हरियाली बनी रहे बहुत काबिले–तारीफ़ है। आपसे मेरा निवेदन है कि कुरुक्षेत्र में इसी प्रकार के अच्छे–अच्छे लेख प्रकाशित करते रहिए।

प्रार्थना भुयां, सिबसागर, असम

सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक लगभग हर क्षेत्र को समेटती अनेक पत्रिकाएं बाजार में उपलब्ध है लेकिन कुरुक्षेत्र की प्रामाणिकता, सजगता और सरलता इसे अन्य पत्रिकाओं से पृथक और बेहतर बनाती है। जल संकट को समर्पित कुरुक्षेत्र का जून अंक पढ़ा। इस अंक के भी लेख हर बार की तरह काफी अच्छे रहे। आशुतोष शुक्ल जी का लेख 'दस्तक देता जल संकट' काफी धारदार, वैचारिक, सुन्दर, समस्या को इंगित करता हुआ था जिसने हृदय को अन्दर तक झकझोर दिया। सम्पादक महोदय ने सम्पादकीय का जो सिलसिला फिर से आरंभ किया है उसके लिए वह सभी पाठकों की ओर से बधाई के पात्र है।

अतुल जैकब, सरगुजा, छत्तीसगढ़

कुरुक्षेत्र का जून अंक मैंग्रोव और कच्छ वनस्पतियों की समस्याओं को बाकायदा समेटता है। इसके अतिरिक्त जैव–विविधता और उसका संरक्षण नामक अरविंद कुमार शुक्ल का शोध लेख मन को मोह लेता है। फ्लोरा ऑफ जम्मू और टैक्सोनामिक अध्ययनों पर आधारित यह लेख काफी उपयोगी है। 'दस्तक देता जल संकट' नामक आवरण कथा, अर्थपूर्ण व बेजोड़ संपादकीय और 'ताकि यह हरियाली बनी रहे' नामक लेख बहुत जानकारियां प्रदान करते हैं। पूरी पत्रिका इतनी खूबसूरत है कि रुचि बनी रहती है और पाठक अनायास ही पढ़ता चला जाता है।

अजय गौतम, आजमगढ़ (उ.प्र.)

कुरुक्षेत्र का जून 2007 अंक जो मुख्यतः पर्यावरण एवं इससे संबंधित विषयों पर केन्द्रित है, लाजबाव है, सराहनीय है एवं सर्वोत्कृष्ट अंक हैं। इसके लिए धन्यवाद। श्री डी.डी. ओझा का लेख "जल को बचाना वर्तमान सदी की आवश्यकता" निश्चित ही अनुकरणीय एवं सराहनीय है क्योंकि इसमें जल को बचाने के लिए तरीका बदलने का ढंग लाजवाब है। सभी को इस पर अमल करना चाहिएं। प्रियंका द्विवेदी का लेख "प्राकृतिक संसाधन और उनका संरक्षण" हमें इस बात की चेतावनी देता है कि यदि हम आज नहीं चेंते हो हमारा अंत भी निकट है।

धनंजय मणि त्रिपाठी, गोरखपुर (उ.प्र.)

जल संकट, हरियाली और जैव विविधता जैसी समकालीन समस्याओं पर केन्द्रित कुरुक्षेत्र का जून अंक हस्तगत हुआ। जल, प्रदूषण और पर्यावरण जैसे महत्वपूर्ण विषय पर इतनी उन्नत वैज्ञानिक चेतना से भरा ऐसा खूबसूरत अंक निकालना, आपको धन्यवाद देने के लिए विवश कर रहा है। सम्पादकीय सचमुच बहुत अद्वितीय है। जैव विविधता और हरियाली जैसे विषयों पर केन्द्रित क्रमशः अरविंद कुमार शुक्ल जी और प्रांजल धर जी के लेख आपकी पत्रिका के लिए मील के पत्थर रहेंगे।

सीमा सरोज, सतना (म.प्र.)

पर्यावरणीय संकट पर केन्द्रित जून अंक देखा। आज जबकि ग्लोबल वार्मिंग का खतरा बढ़ता जा रहा है तो विश्व में हर प्राणी की मूलभूत आवश्यकता पानी का संकट गहराता जा रहा है। हर बार की माफिक इस बार भी कुरुक्षेत्र के लेख बहुत अच्छे लगे। आशुतोष शुक्ल महोदय ने पानी के संकट की जो तस्वीर पेश की है वह स्वागत योग्य है। संपादक जी ने संपादकीय में भी समस्या के हर पहलू को उजागर किया है। कुरुक्षेत्र एक निहायत जिम्मेदार पत्रिका है और यही कारण है कि यह मेरी सबसे प्रिय–पत्रिका है।

बालाजी शिंदें, जलगांव, महाराष्ट्र

पंचायती राज की बदलती तस्वीर

आशुतोष शुक्ल

भारत जैसे विशाल आबादी वाले राष्ट्र में जहां की अधिकांश आबादी अभी भी गांवों में बसती हैं उनके विकास संबंधित कार्यों, चाहे वह शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार हो या बिजली, पानी, सड़क जैसी मूलभूत आवश्यकताएं, इन सबका प्रबंध गांवों की पंचायतें पहले भी करती आई हैं और आज भी कर रही हैं। गुलामी के दौर में भी ये पंचायतें उतनी ही संगठित थी जितनी कि आज हैं। पंचायती राज का सिलसिला भारत के लिए कोई नई बात नहीं है क्योंकि वैदिक काल, बुद्ध काल, मौर्यकाल, गुप्तकाल, मुगलकाल लगभग हर काल और दशक में गांवों की जनता की बुनियादी सुविधाओं को उपलब्ध कराने तथा उनके जमीन, जायदाद, घरेलू कलह, विवाह संबंधी समस्याओं, लगभग सभी कार्यों में पंचायतों ने महती भूमिका निभायी है। पंचायती राज व्यवस्था हमारी स्वविकसित व्यवस्था है तथा यह व्यवस्था हमने किसी अन्य राष्ट्र से उधार नहीं ली है।

पंचायती चुनाव में अपना वोट डालते हुए युवा मतदाता

पंचायती राज की स्वनिर्मित प्रणाली को देखने और जानने के लिए इतिहास की ओर पलटकर देखना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। वैदिक काल में गांवों का प्रबंध सभा और समिति नामक संस्थाएं करती थीं। मजे की बात यह है कि ये संस्थाएं सिर्फ गांवों का प्रबंध ही नहीं करती थीं बल्कि राजा पर भी नियत्रंण रखती थीं। प्रबंध कुछ ऐसा था कि सभा वृद्धजनों की संस्था थी। जो लोगों का मार्गदर्शन करते थे, वहीं समिति आमजनों की संस्था थी यह संस्था आम राय से कोई प्रस्ताव पारित करती थी। खास बात यह है कि वैदिक काल में स्त्रियां भी सभा और समिति में बखूबी दखल रखती थीं। इनकी सहमति और असहमति को बड़ी गंभीरता से लिया जाता था। यहां तक कि विरोध का स्वर मुखर होने पर मामले पर पुनर्विचार किया जाता था।

बुद्ध काल में पंचायतों का और अधिक विकास हुआ। अब जबकि क्षेत्रीय आधार पर राज्य का विकास हुआ तो शांति–सुव्यवस्था बनाए रखने और व्यापार आदि की जिम्मेदारी ग्राम प्रधान पर आ गयी। अगर अपने कर्तव्य को निभाने में ग्राम प्रधान कोई बेईमानी, लालच या बेवकूफी करता था तो ग्रामवासी मिलकर उसे दंड देते थे। इस समय गणतंत्र की जो प्रणाली विकसित हुई उसने भी जनता की समस्याएं बखूबी सुलझायीं। इस काल में न्याय व्यवस्था बहुत सुदृढ़ हो चुकी थी। मसलन, जब कोई मामला ग्राम पंचायत के समक्ष लाया जाता था तो पंच उसे ऊपर की अदालत में भेज देते थे। एक के ऊपर एक लगभग सात न्यायपीठों से गुजरकर कोई मामला अंतिम रूप से सुनाया जाता था। इन गणतांत्रिक राज्यों में लगभग हर वर्ण और जाति के लोग अपना मामला रख सकते थे और न्यायाधीश बिना किसी भेदभाव के उस पर अपना निर्णय देते थे।

मौर्यकाल में कौटिल्य ने प्रजा के सुख में राजा का सुख और प्रजा के दुख में राजा का दुख माना, शायद इसलिए उन्होंने भी गांवों पर विशेष ध्यान दिया। कौटिल्य ने न्याय तथा प्रशासन में पंचायतों की भूमिका को महत्वपूर्ण माना और अपने मामले जल्द से जल्द ईमानदारीपूर्वक सुलझाने का सुझाव दिया। गुप्तकाल में भी कमोबेश ऐसी ही व्यवस्था बनी रही और हर्षकाल में भी ग्राम प्रधान निर्वाचित होता रहा।

दक्षिण भारत के चोल शासकों के समय की पंचायत व्यवस्था आज के युग के अत्यधिक विकसित राज्यों के लिए भी मील का पत्थर है। सल्तनत काल और मुगलकाल में भी ग्राम पंचायतों के मामलों में न तो जबरन हस्तक्षेप किया गया और न ही किसी भी प्रकार की बंदिशें थोपी गयीं।

अंग्रेजों ने पंचायतों की स्वतंत्रता का काफी हद तक हनन किया, स्थायी बंदोबस्त, इजारेदारी–व्यवस्था आदि के द्वारा अंग्रेजों ने गांवों की जनता पर बहुत से कर थोप दिए। ग्राम पंचायत को कानूनी शिंकजे का भय दिखाकर और डरा–धमकाकर शोषण में जबरन भागीदार बना लिया। वाणिज्यीकरण और औद्योगीकरण का दुष्प्रभाव कुछ ऐसा हुआ कि पंचायती संस्थाएं नष्ट तो नहीं हुई लेकिन

कमजोर अवश्य हो गयीं। यद्यपि रिपन जैसे वायसराय ने पंचायतों को कुछ अधिकार अवश्य दिए तथा स्थानीय नगरपालिका और नगर निकाय में प्रजातंत्र लाने का प्रयास किया लेकिन यह सभी प्रयास नाकाफी साबित हुए। वैसे भी रिपन की नीतियों को इंग्लैण्ड में बैठी सरकार की सहमति इसलिए नहीं मिल रही थी कि वह वास्तव में ग्राम पंचायतों का विकास करना चाहते थे या गांवों के लोगों में स्वशासन की भावना से प्रेरित थे बल्कि इन कदमों के पीछे एक व्यापक पूंजीवादी सोच और हित काम कर रहे थे जिसके तहत मैनचेस्टर और बर्मिघम में आधुनिक मशीनों द्वारा उगल रहे माल के लिए एक उपभोक्ता वर्ग तैयार करना था। जाहिर है, कि अंग्रेजों ने भारत में पंचायती राज को कमजोर करने का हर संभव प्रयास किया लेकिन गुलामी में जकड़ी भारत की पंचायतें सांसें भरती रहीं।

अंततः आजाद भारत की खुली हवा में पंचायतें विकास के नए दौर में प्रवेश कर पायीं। हालांकि आजादी के बाद भारत की सरकार ने बड़ी चर्चाओं और बहसों के पश्चात इनके लिए नियम–कानून बनाए। पचास के दशक में संविधान को अमली जामा पहनाने के समय पंचायतों को राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्त के तहत जगह मिली। यानी पंचायतों के कर्तव्य और अधिकार के प्रति किसी भी सरकार को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती थी, पंचायतों के बारें में इन्हें स्वेच्छा से निर्णय करना था। इससे हुआ यह कि एक तो पंचायतों की प्रगति धीमी हो गयी, हर राज्य की अलग–अलग प्राथमिकता थी और उसके मुताबिक अलग पृथक–पृथक नियम और कायदे। यह कार्य भारत के संविधान के अनुच्छेद 40 में पंचायतों की व्याख्या के अनुरूप नहीं थे जिसमें साफ तौर पर लिखा है कि 'राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए कदम उठाएगा और उनको ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हों। इसमें यह विश्वास झलकता है कि ग्राम पंचायतों के संगठन से आत्मनिर्भरता, समृद्धि, खुशहाली तथा प्रबंधन का समावेश इनमें हो सकेगा। चूंकि भारत एक लोकतंत्र है और लोकतंत्र में जनसहभागिता और विकेन्द्रीकरण प्रमुख तत्व होते हैं। इसलिए लोकतांत्रिक व्यवस्था को सफल बनाने के लिए सत्ता का स्वकेन्द्रीकरण, राजनीतिक–प्रशासनिक सहभागिता में उत्तरोत्तर वृद्धि और इन सबके लिए स्थानीय इकाइयों को मजबूती देना आवश्यक हो जाता है।

सरकार ने शुरू–शुरू में इन उद्देश्यों को अमल में लाने के लिए गांधी जी के जन्म दिवस 2 अक्टूबर 1952 को सामुदायिक विकास कार्यक्रम आरंभ किया जिसके अंतर्गत खण्ड को एक इकाई मानकर खण्ड के विकास हेतु सरकारी कर्मचारियों–अधिकारियों के साथ सामान्य जनता को विकास की प्रक्रिया से जोड़ने का प्रयास किया गया लेकिन इस कार्यक्रम की सबसे बड़ी खामी यह रही कि जनता को अधिकार नहीं दिया गया जिस कारण से यह कार्यक्रम सफल न हो सका। लेकिन इसका फायदा यह मिला कि नीतियों में कमियों की ओर ध्यान दिया गया। इसी कार्यक्रम की तर्ज पर 2 अक्तूबर 1953 को राष्ट्रीय प्रसार सेवा का प्रारंभ किया गया लेकिन यह कार्यक्रम भी ज्यादा दिन चल न सका। सरकार ने इन गलतियों से सबक लेकर 1957 में बलवंत राय मेहता की अध्यक्षता में ग्रामोद्धार समिति का गठन किया। इस समिति ने अपनी सिफारिशें पेश की जिसमें त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था का सुझाव था। जो जिला स्तर पर जिला पंचायत, तहसील स्तर पर तहसील पंचायत और ग्राम तथा छोटे–मोटे गांवों से थोड़ा समृद्ध कस्बों के लिए नगर पंचायत के रूप में थीं। सिफारिश में गांव समूहों के लिए प्रत्यक्ष निर्वाचित पंचायत समितियां तथा खंड एवं जिला स्तर पर निर्वाचित व नामित सदस्यों की मांग की गयी। मेहता समिति की सिफारिशों को 1958 में लागू किया गया। इसी समिति को ध्यान में रखते हुए राजस्थान की सरकार ने 2 सितम्बर 1959 को पंचायती राज अधिनियम पारित किया। 2 अक्टूबर 1959 को राजस्थान के नागौर जिलें में पंचायती राज की नई व्यवस्था लागू की गयी। राजस्थान वह पहला राज्य था जिसने पंचायती राज व्यवस्था को तृणमूल स्तर के विकास की परिभाषा के रूप में सिर्फ कागजों पर ही नहीं सिमट जाने दिया बल्कि जमीनी हकीकत को सुदृढ़ व व्यवस्थित शक्ल दी। यानी आगाज हो गया था तो फिर क्या था! एक के बाद एक राज्य ने पंचायती राज अधिनियम पारित कर व्यवस्था को लागू किया।

आंध्र प्रदेश इन राज्यों की श्रेणी में पहले पायदान पर रहा तो उसके बाद पंजाब, महाराष्ट्र, गुजरात, उत्तर प्रदेश आदि राज्यों ने भी पंचायतों को नई शक्तियां और अधिकार दिए। बलवंत राय मेहता समिति की सिफारिशें पंचायती राज के लिए मील का पत्थर साबित हुई। इसके बाद कई समितियां आई। उदाहरण के तौर पर बलवंत राय मेहता समिति की सिफारिशों को लागू करने के बाद इसमें कई कमियां दिखाई दीं जिन्हें दूर करने के लिए 1977 में अशोक मेहता की अध्यक्षता में 13 सदस्यीय समिति का गठन किया गया। लगभग डेढ़ सौ सिफारिशों के साथ समिति ने 1978 में अपनी रपट भारत सरकार को सौपीं।

इसमें विकेन्द्रीकरण का प्रथम स्तर जिला माना गया, जिला स्तर के नीचे बीस हजार जनसंख्या और 15–20 गांव वाली मण्डल पंचायत के गठन की मांग की गयी। कार्यकाल 4 वर्ष करने की बात की थी लेकिन इस समिति की संस्तुतियों को नाकाफी मानते हुए लागू नहीं किया गया। तत्पश्चात 1985 में पी. बी. के राव समिति आई। इसने भी कुछ सिफारिशें की। फिर संथानम समिति आई जो पंचायतों को राजस्व के साधन सौपनें, राज्य सरकारों द्वारा पंचायतों को वार्षिक अनुदान, विभिन्न प्रकार के कर लगाने की शक्ति देने, पंचायती राज वित्त निगम की

स्थापना, वित्तीय सहायता किसानों को मिल सके, इसके लिए उनके अपने वित्तीय संस्थान और अधिकार व्यापक रूप से मिल सकें आदि संस्तुतियां की। इसके बाद आयी सिंघवी समिति ने भी गांवों के पुनर्निर्माण के लिए वित्तीय संसाधनों की समुचित पहुंच पर जोर दिया। 1988 में गठित पी. के. थुंगन समिति ने पंचायतों को संविधान में नीति निर्देशक सिद्धान्तों के स्वप्रेरित खण्ड से पृथक कानून के रूप में जगह देने की मांग की तथा संविधान में पंचायतों के गठन और क्रियान्वयन को बाहयकारी करने की सिफारिश भी की। संस्तुति के बाद 64वां संविधान संशोधन लोकसभा में पारित किया गया लेकिन यह विधेयक राज्य सभा में पास न किया जा सका। फिर 74वां संविधान संशोधन विधेयक भी लोकसभा के भंग हो जाने पर समाप्त हो गया। फिर 72वां संविधान संशोधन पारित हुआ जो संयुक्त समिति के पास करने के बाद 73वें संविधान संशोधन के रूप में 1992 में लोकसभा, राज्य सभा और राज्य विधान सभाओं द्वारा पारित किया गया। 1993 में इसे राष्ट्रपति की अंतिम मंजूरी मिली।

भारत में पंचायती राज के लिए यह कदम ऐतिहासिक तो था ही, गौरवान्वित भी कर रहा था। इस संविधान संशोधन से पंचायतों में महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया को भी बल मिला। चूंकि इस संशोधन से पूर्व गांवों, कस्बों आदि की अशिक्षित किन्तु योग्य महिलाओं को उनका सही स्थान तथा हक नहीं मिल पा रहा था। चूंकि महिलाएं योग्य तो होती थीं लेकिन रूढिवादी समाज में धीरे–धीरे महिलाओं की स्थिति बद से बदतर होती चली गयी। दलित और पिछड़े वर्ग की महिलाओं की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। यह सभी महिलाएं चाहकर भी शिक्षा ग्रहण न कर पातीं, कानूनी और प्रशासनिक अधिकार शून्य थे। इसलिए इस संविधान संशोधन में पंचायतों के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण का प्रावधान किया गया। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण प्रदान किया गया। ग्यारहवीं अनुसूची का समावेश भी भारत के संविधान में पंचायतों के अधिकारों एवं कर्तव्यों के लिए किया गया। पशुपालन, कृषि सुधार और विस्तार, मत्स्य उद्योग, वन उत्पाद, खादी ग्राम और कुटीर उद्योग, ग्रामीण आवास, पेयजल, पशु संरक्षण, प्रसंस्करण उद्योग जैसे व्यापक क्षेत्रों को इस अनुसूची के द्वारा पंचायतों की शक्तियों के भीतर लाया गया। अब पंचायतों में महिलाओं का स्थान सुरक्षित हो गया। इसलिए महिलाओं ने बहुत से लद्यु उद्योगों में होने वाले महिला शारीरिक और मानसिक उत्पीड़न के प्रति आवाज उठायी। धीरे–धीरे महिलाओं के वर्चस्व वाले उद्योगों में इन महिला सरपंचों ने उनके व्यक्तिगत और सामूहिक स्वामित्व वाले उद्योगों को प्रोत्साहन देना प्रारम्भ किया।

इससे एक तरह तो महिलाएं आर्थिक और राजनीतिक रूप से सक्षम हो गयीं। वहीं दूसरी तरह आने वाली पीढ़ियां खासकर बालिकाओं को भी शिक्षा के अवसर मुहैया हो गए। शायद यही कारण है कि बहुत बड़े स्तर पर न सही लेकिन कुछ एक गांवों और कस्बों से आज बहुत सी बालिकाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, प्रशासन आदि में झंडे गाड़ते देखा जा सकता है। वैसे भी जब किसी समाज में किसी उपेक्षित एवं शोषित वर्ग के पास राजनीतिक और आर्थिक शक्ति आती है तो समाज में उसका दर्जा बढ़ जाता है और यही किसी राष्ट्र या समुदाय के विकास का लक्षण है। इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण है कि बिहार जैसे पिछड़े राज्य की मुसहर जैसी शोषित जाति की गिरिजा देवी संयुक्त राष्ट्र संघ को संबोधित करती हैं। इतना ही नहीं संयुक्त राष्ट्र संघ के आर्थिक और सामाजिक विभाग द्वारा आयोजित महिला सशक्तिकरण के कार्यक्रम में गिरिजा देवी द्वारा दिए गए सुझावों को विश्व के बड़े–बड़े गैर सरकारी संगठनों ने लागू करने की बात कहकर, न केवल इस महिला को बल्कि भारत के पंचायती राज की सफलता को स्वीकार किया है। गांवों, ग्राम पंचायतों और गांव के कमजोर वर्गों को मजबूत बनाने के लिए आए दिन नए प्रयास भी होते रहते हैं। गांवों में स्वास्थ्य संबंधी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए कुछ नए प्रावधान लाए गए हैं। इसके तहत एम.बी.बी.एस की डिग्री लेने वाले डाक्टरों को अपने कॉलेज में छह महीने की अतिरिक्त पढ़ाई करनी होगी और ग्रामीण इलाके के किसी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र पर अपनी सेवाएं एक साल के लिए अनिवार्य रूप से देनी होगी। हालांकि चिकित्सा सगंठनों तथा छात्र–यूनियनों ने इस पर विरोध भी जताया। तर्क दिया कि छात्र गांवों में रहकर पढ़ाई–लिखाई भूल जाएगा। लेकिन यह छात्र और संगठन भूल जाते हैं कि कोई भी सैद्धान्तिक शिक्षा तभी कारगर हो सकती है जब वह व्यवहार में लायी जाए। उस पर भी भारत जैसे विशाल देश में गांव शरीर में आत्मा की भांति है।

ग्राम न्यायालयों की कमी को देखते हुए अब गांवों में न्यायालय की स्थापना के विषय में भी विचार किया जा रहा है। इसकी एक रूप–रेखा भी तैयार कर ली गयी है जिसमें न्यायालयों को कुछ सीमित स्तर के दीवानी तथा फौजदारी विवादों को सुलझाना होगा। फौजदारी विवादों में हत्या, डकैती आदि मामले ग्राम न्यायालयों से ऊपर देखे जाएगें तथा जमीन आदि के दीवानी मामलों में कुछ मुचलका देकर सुलह–समझौता कराने का अधिकार इन न्यायालयों को दिया जाएगा। इन न्यायालयों की स्थापना से लेकर कार्य–व्यवहार तक लगभग हर कार्य में ग्राम पंचायतों की एक बड़ी भूमिका होगी। इस तरह गांवों के राजनीतिक–प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण के बाद अब न्यायिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया केन्द्र, राज्य और जिला से नीचे उतरकर गांवों में स्थापित होगी। पंचायतों के माध्यम से रोजगार दिलाने, अच्छे सरपंचों एवं गावों को पुरस्कार देने और गांवों का विकास करने के लिए किए गए सरकारी और गैर–सरकारी प्रयास अत्यंत सराहनीय है। सरकार द्वारा पंचायतों के सहयोग से राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी

योजना चलायी गयी है। जिसमें गावों के हर परिवार के व्यक्ति को सौ दिन का रोजगार मुहैया कराया जाता है, फिर महिलाओं को अपने बच्चे साथ लाने की भी सुविधा है तथा वह किसी सहायक को भी बच्चों की देखभाल के लिए साथ ला सकती है। इस योजना से कई फायदे सामने आए। एक तो ग्रामीण क्षेत्र के लोगों का शहरों की ओर पलायन रुक गया। क्योंकि यह व्यक्ति शहरों में मजदूरी के लिए आते थे लेकिन अमानवीय परिस्थितियों और घटिया जीवन शैली के शिकार हो जाते थे। महिलाओं को उनके पास–पड़ोस में काम मिलने से वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन गयी जिससे घर तथा पंचायतों लगभग हर स्थान पर अपना मत देने लगी। ग्राम पंचायतों को पुरस्कृत करने के लिए सरकार ने निर्मल ग्राम पुरस्कार देना भी प्रांरभ किया है। निर्मल ग्राम पुरस्कार में साफ, स्वच्छ और विकासशील गांवों को नगद सहायता, प्रशस्ति पत्र और कार्यों में प्राथमिकता दी जाती है। यद्यपि इनमें कभी–कभी कमियां भी रह जाती है। गैर–सरकारी संगठन गांवों की हकीकत जानने तथा उनमें सुधार लाने के लिए सोशल–ऑडिट जैसी प्रणाली अपनाते हैं। सोशल ऑडिट, सरकारी आंकड़ों के समानांतर चलने वाली कार्रवाई है जिसमें वास्तविकता का सरकारी आकड़ों से मिलान किया जाता है। जैसे कि कितने मजदूरों को काम पर रखा गया है, जितने मजदूरों को काम करते दिखाया गया है क्या वह सच है, मज़दूरों को वास्तविक मज़दूरी कितनी मिल रही है, कहीं ऐसा तो नहीं कि मज़दूरी की दर न्यूनतम मज़दूरी दर से कम है, ग्राम प्रधानों ने सरकार से मिले पैसों का इस्तेमाल कहां–कहां और कैसे किया है, क्या महिलाओं का उत्पीड़न तो नहीं हो रहा है, क्या मजदूरी महिलाओं के हाथ में दी जाती है या फिर उनके पति झपट लेते हैं। ऐसी न जाने कितनी छोटी–बड़ी बातों का मुआयना और जांच–पड़ताल सोशल ऑडिट के जरिए गैर–सरकारी संगठन करते हैं। सोशल–ऑडिट से सरकार को भी अपनी कमियों को दूर करने का मौका मिलता है।

आज भारत वर्ष में पंचायती राज के माध्यम से बहुत से विकास के ऐसे–ऐसे काम हो रहे हैं जिससे देश प्रगति की सीढ़ियों पर लगातार चलता जा रहा हैं। लेकिन इन सबके बावजूद भारतीय समाज में सैकड़ों वर्षों से चली आ रही बुराईयों ने पंचायतों के काम–काज में विघ्न भी डाला है। मिसाल के तौर पर, महिला और दलित जन प्रतिनिधियों द्वारा अधिकारों का प्रयोग बंदिशों से ग्रस्त है। पुरुष सत्तावादी सोच वाले समाज में महिला प्रतिनिधियों के पति, पुत्र, पिता और ससुर उनके निर्णय में पूरा हस्तक्षेप करते हैं। वही बाहुबली लोग स्वयं पर आश्रित लोगों को चुनाव में विजय दिलाते हैं। इस प्रकार जीतकर आए जनप्रतिनिधि रबर स्टाम्प भर बनकर रह जाते हैं। जाहिर है, यदि कुछ स्थानों पर पंचायतों के बड़े–बड़े पदों पर विराजमान लोगों की स्थिति ऐसी है तो सामान्य जनता के अधिकारों का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। वैसे भी आज की बहुत सी पंचायतों में पैसा, ताकत, जातिवाद, साम्प्रदायिकता लगभग हर वो चीज जो बाहुबली या नेता भुना सके, इन सबका प्रयोग ब्रह्मस्त्रों की तरह करते हैं। आलम यह है कि जब कोई मुखिया या ब्लॉक प्रमुख या कोई अन्य पद धारक अपना वोट बैंक बढ़ाने तथा राजनीतिक हित साधने के लिए अपने अधिकारों के नाजायज प्रयोग से भी नहीं चूकता है।

एक छोटा–सा दृष्टांत ही लें जो लगभग हर व्यक्ति की नजरों से गुजरता है और वह है गांवों में सरकारी हैंडपंप लगवाना। कुछ गांवों में आज भी जब हैंडपंप लगवाने की बात आती है तो गांव का मुखिया गांवों का निरीक्षण करता है। यद्यपि यह निरीक्षण हैंडपंप के लिए सही स्थान का चुनाव, जिसके अंतर्गत व्यापक पहुंच तथा सरलमार्ग आदि की वरीयता के लिए किया जाना चाहिए; अफसोस, होता इसके विपरीत है। सर्वप्रथम तो ग्राम प्रधान गांव के सबसे ज्यादा रसूख वाले व्यक्ति से विचार–विमर्श करता हैं और जैसा कि तय रहता है– हैंडपंप इसी व्यक्ति के दरवाजे पर लगा दिया जाता है। यह स्थिति बदल भी सकती है तब जबकि किसी गांव में लोगों की हैसियत लगभग बराबर हो ऐसी स्थिति में इन नेताओं का चुनाव सर्वाधिक सदस्य संख्या वाला घर होता है।

बात सिर्फ यहीं खत्म हो जाती तो और बात थी। शिक्षा किसी भी समाज की सभ्यता और संस्कृति की न केवल पहचान होती है बल्कि वाहक भी होती है। ग्राम पंचायतों को गांवों में शिक्षा की स्थिति सुधारने, स्तर में सुधार तथा हर तबके के लोगों को शिक्षा मुहैया कराने के व्यापक अधिकार मिले हैं। कुछ राज्यों में तो शिक्षा के संसाधनों में कमी तथा अध्यापकों के पलायन के कारण शिक्षा मित्रों की नियुक्ति की गयी है। यह अस्थायी रूप से शैक्षणिक कार्यों के लिए बहाल किए जाते हैं। इनकी नियुक्ति की संस्तुति ग्राम प्रधान करता है। यहां भी कभी–कभी ग्राम प्रधानों का निर्णय दबंग लोगों के साथ रहता है। वहीं मिड–डे मील के तहत बच्चों को बांटने वाले अनाज में धांधली की घटनाएं भी सामने आती ही रहती हैं। यहां भी जिला परिषद के कारिंदों और अधिकारियों की मिली भगत से इंकार नहीं किया जा सकता।

इस प्रकार के कार्य–व्यापार और घटनाएं हमेशा और हर जगह होती हैं, ऐसा भी नहीं है। यह स्थिति तो उन चंद स्थानों और लोगों की है जिन्हें भ्रष्टाचारी व रिश्वतखोरी का कीड़ा चाले डाल रहा है। भारत के ज्यादातर गावों के ग्राम पंचायतों और ब्लाक तथा जिला परिषदों की तस्वीर न केवल बेहतर है बल्कि नए–नए प्रतिमान भी खड़े कर रही है। गांधी–नेहरू, सुभाष, अंबेडकर के इस देश में इन महापुरुषों के सपने तभी सच होंगे जब एक–एक गांव साक्षर, सुन्दर, स्वशासित, विकासयुक्त व भ्रष्टाचार मुक्त बन सकेगा।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)
ई–मेल–iiiashu@rediffmail.com
सी–210, द्वितीय तल, नेहरू विहार, तिमारपुर दिल्ली–54

India's No. 1 IAS Training Institution

ALS

Training Steel Pillars For The Nation

IAS 2007 Results 103

7 in top 50
19 in top 100
Total selections 103

UNPARALLELED ACHIEVEMENTS

In the past six years, Interactions IAS Study Circle is credited to have illumined the career graph of 2 IAS toppers, 24 rankers in top 20, 54 in top 50 and altogether 430 successful Candidates.

Alok Ranjan Jha (2001)

S. Nagarajan (2005)

1 RANK

MANOJ JAIN (2006)

15

हिन्दी माध्यम में सर्वोच्च स्थान

The National Leader in IAS Entrance Training

सामान्य अध्ययन

GSFOUNDATION

समग्र समाधान 2008-09

Prelim-cum-Main Comprehensive GS Training Programme

The BEST EVER GS TEAM (हिन्दी माध्यम)

अद्भुत क्षण
30 hours with **Shashank Atom**

भारतीय अर्थव्यवस्था
By **PK Jha & Arunesh Singh**

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी
Section-wise panel of experts **(Jojo Mathews, Dr. Sheelwant Singh & JP Narayan)**

इतिहास व संस्कृति
By **YD Mishra & AK Jha**

भूगोल एवं पर्यावरण संबंधी मुद्दे
By **Alok Ranjan & Other Experts**

समसामयिकी
By **Dr. Sheelwant Singh & Dr. SP Jha**

मानचित्र अध्ययन
By **BM Panda**

भारतीय राजव्यवस्था
By **Manoj K Singh & Dr. CK Singh**

सामान्य विज्ञान
By **Dr. Shashi Shekhar** (Physics & Chemistry) & **JP Narayan** (Bio)

सांख्यिकी व मानसिक योग्यता
By **Arvind Singh**

हमारी कक्षागत योजना (Programme Highlights)

कालक्रम-बद्ध पाठ्यक्रम : • 500+ घंटे का क्लासरूम प्रशिक्षण • कक्षा प्रारंभ में परीक्षा संबंधी रणनीति व GS Basics की जानकारी • राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक व समसामयिक विषयों की तैयारी हेतु विश्लेषणात्मक प्रशिक्षण व्यवस्था • सामान्य ज्ञान (GK) अभिवर्धन पर विशेष बल • कक्षा प्रारंभ के पूर्व ही पाठ्य सामग्री का वितरण • कम्प्युटर/प्रोजेक्टर आधारित प्रशिक्षण योजना • शंका समाधान सत्र • पाठ्यक्रम पुनरावलोकन सुविधा।

लेखन कौशल संवर्धन कार्यक्रम : • मुख्य परीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर लेखन का अभ्यास (250 शब्द, 150 शब्द, 20 शब्द) • लेखन शैली पर हमारे IAS Toppers द्वारा Orientation Programme. • परीक्षा टेस्ट की व्यवस्था • 15 प्रारंभिकी टेस्ट सिरीज व्याख्या सहित (PTSP) • 6 मुख्य परीक्षा टेस्ट सिरीज व्याख्या सहित।

Programme Director
Manoj Kumar Singh *(Managing Director, ALS)*

कक्षा प्रारंभ 17 अगस्त | समय : 3:30pm to 6:30pm

ALS Alternative Learning Systems | IAS Study Circle interactions Shaping dreams into success

Alternative Learning Systems (P) Ltd.
Corporate Office: B-19, ALS House, Commercial Complex, Dr Mukherjee Nagar, Delhi-9
Ph. 27651700, 27651110 • **South Delhi Centre :** 62/4, Ber Sarai, Delhi-16, Ph. 26861313
Mobile Nos. 9910600202, 9910602288

IAS 2007 Results : 7 in TOP 50

Shainamola AIR - 20

Atul Kumar AIR - 22

Sachindra PS AIR - 26

Abhay AIR - 33

Ardra Agarwal AIR - 41

Sanjay K Singh AIR - 42

Sailesh K C AIR - 44

KH-08/07/02

पंचायती राज : यथार्थ के आइने में

तीर्थ प्रकाश व संतोष कुमार सिंह

विकास के विभिन्न प्रतिमानों में गांधीवादी प्रतिमान सर्वोदय एवं अन्त्योदय भारतीय परिवेश में पंचायती राज की आधारशिला बन गए हैं। गांधीजी मानते थे "भारत की आत्मा गांवों में बसती है। यदि गांव नष्ट होते हैं तो भारत भी नष्ट हो जाएगा।" इसी संकल्पना ने स्वतंत्रता के पश्चात् गांव की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक नये युग का सूत्रपात किया। भारतीय संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों में इसकी स्पष्ट झलक दिखाई देती है। उपनिवेशीय युग के दौरान शहर संसाधनों के केन्द्र बने और गांव पिछड़ेपन की पहचान बन गये थे। यह अन्तर एक चौड़ी खाई के रूप में नजर आने लगा था। आजादी के आन्दोलन के दौरान ग्रामीण पिछड़ेपन का मुद्दा भी अंग्रेजों की शोषण नीति का हिस्सा बनकर उभर रहा था। भारतीय राजनीति में विभिन्न नेतृत्वों के माध्यम से इस अन्तर को समाप्त करने पर जोर दिया जा रहा था। इसी जद्दोजहद में अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति के विकास को गांधीजी के आदर्शों और अपने सपनों के भारत में तवज्जों दी गई। हमारे संविधान निर्माताओं ने भी ग्रामीण शासन व्यवस्था को पुख्ता बनाने के लिए विशेष ध्यान दिया। इसका अंदाजा सहज ही भारतीय संविधान के भाग–4 जिसमें नीति निदेशक तत्वों के माध्यम से अनुच्छेद–40 में पंचायतों के गठन के संदर्भ में व्यवस्था की गई है कि "राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए कदम उठाएगा और उनको ऐसी शक्तियां और प्राधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हो।" से लगाया जा सकता है।

आजादी के पश्चात् भारत में जो लोकतांत्रिक पद्धति अस्तित्व में आयी उसके प्रारम्भिक चरणों में केन्द्रीयकरण पर बल दिया गया। जिसमें पंचायती राज की व्यवस्था को मूर्तरूप देना संभव ना हो सका। राजनैतिक इच्छा शक्ति और नौकरशाही दोनों ही एक हद तक इसके लिए जिम्मेदार रहे हैं। केन्द्रीयकरण से लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में नया मोड़ पंड़ित जवाहरलाल नेहरू के उस कथन से आया जिसमें उन्होंने ग्रामीणों को अधिकार देने और अपने विकास के मार्ग को स्वयं तय करने के संबंध में कहा गया था कि, "गांवों के लोगों को अधिकार सौंपना चाहिए। उनको काम करने दो चाहे वे हजारों गलतियां करें। इससे घबराने की आवश्यकता नहीं है। पंचायतों को अधिकार दो।" इस एक कथन ने भारत की ग्रामीण जनता को ऐसा अस्त्र प्रदान करने का कार्य किया जिससे वे अपनी भूख, गरीबी और अशिक्षा जैसी सदियों पुरानी सामाजिक बुराइयों को दूर करने में जागरूक हो सकी। इसी क्रम में प्रथम पंचवर्षीय योजना (1952–57) के दौरान 2 अक्टूबर 1952 को भारत के ग्रामीण क्षेत्रों के समग्र और क्रांतिकारी उत्थान के लिए सामुदायिक विकास कार्यक्रम (सी.डी.पी.) की शुरूआत हुई। कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य, सहकारिता, सिंचाई, ग्रामोद्योग, सड़क परिवहन, पशुपालन को समर्पित यह कार्यक्रम विश्व में अपनी किस्म का एक अनूठा ग्राम विकास कार्यक्रम था। किंतु यह निष्कर्ष निकला कि जागरूकता कार्यक्रमों के अभाव में सामुदायिक विकास कार्यक्रम में ग्रामीणों ने रुचि नहीं दिखाई जिससे यह कार्यक्रम असफल हो गया। इस कार्यक्रम की विफलता ने नीति निर्माताओं को सोचने पर मजबूर कर दिया।

भारत के ग्रामीण विकास को किस मार्ग से आगे बढ़ाया जाए। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए बलवंतराय मेहता समिति का गठन किया गया। इस समिति की सिफारिशें 24 नवम्बर 1957 को सरकार के सम्मुख रखी गईं। इन्हीं सुझावों के आधार पर 2 अक्टूबर 1959 को तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू द्वारा राजस्थान के नागौर से पंचायती राज व्यवस्था का शुभारंभ किया गया।

स्वतंत्रता के पश्चात भारत में पंचायती राज

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात पंचायती राज व्यवस्था के पुनर्निर्माण का प्रयास किया गया। लोकतांत्रिक व्यवस्था को आधार देने के सम्बन्ध में समय–समय पर अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किये गए जिनका विवरण निम्न है:–

बलवंतराय मेहता समिति (1957)

पंचायती राज व्यवस्था की नींव सर्वप्रथम बलवंतराय मेहता समिति द्वारा रखी गई। जिसने अपनी रिपोर्ट 24 नवम्बर 1957 को सरकार के सम्मुख प्रस्तुत की, जिसका विवरण निम्न है:–

- पंचायती राज का ढ़ांचा त्रिस्तरीय होगा। यह ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, ब्लॉक स्तर पर पंचायत समिति और जिला स्तर पर जिला परिषद।

- पंचायतें पूर्ण रूप से निर्वाचित इकाइयां होनी चाहिएं।
- पंचायतों में महिलाओं के 2 और अनुसूचित जाति और जनजाति के 1–1 सदस्यों के प्रतिनिधित्व का प्रावधान होना चाहिए।
- पंचायत का अपने क्षेत्र के अन्तर्गत होने वाले सभी विकास कार्यों पर पूर्ण नियंत्रण होना चाहिए। सरकार का कार्य केवल नियोजन, निरीक्षण और निर्देशन तक सीमित होना चाहिए।
- केन्द्र या राज्य सरकार के निर्देशन और नियंत्रण ब्लॉक स्तर पर होने चाहिए। समस्त आर्थिक सहायता पंचायत समिति के माध्यम से व्यय की जानी चाहिए।
- सफाई, जल आपूर्ति, प्रकाश व्यवस्था, सड़कों का रख–रखाव तथा भूमि प्रबन्धन ग्राम पंचायतों का अनिवार्य कर्तव्य निर्धारित किया जाना चाहिए।
- बलवंतराय मेहता समिति ने जो रिपोर्ट प्रस्तुत की उसमें लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की स्पष्ट छाप दिखाई देती है।

अशोक मेहता समिति (1977)

पंचायती राज व्यवस्था को अधिक सक्रिय और उत्कृष्ट बनाने के लिए भारत सरकार ने अशोक मेहता समिति का गठन किया, जिसने अपनी रिपोर्ट 12 दिसम्बर 1977 को सौंपी जिसमें निम्न सिफारिशें की गई थीः–

- पंचायती राज का ढांचा त्रिस्तरीय न होकर द्विस्तरीय होना चाहिए। पहला जिला स्तर पर तथा दूसरा मण्डल स्तर पर। जिला स्तर पर जिला परिषद और ब्लॉक स्तर पर मण्डल पंचायत।
- जिला परिषदों का गठन प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर ही होना चाहिए।
- जिला परिषद को जिलाधिकारी के अधीन किया जाना चाहिए। जिला परिषद का अध्यक्ष गैर सरकारी व्यक्ति होना चाहिए।
- जिला परिषद के बाद मण्डल पंचायतों को विकास कार्यक्रम का आधारभूत संगठन बनाया जाना चाहिए। मण्डल पंचायतों का गठन कई गांवों से मिलकर होगा। ये मण्ड़ल पंचायतें 15000 से 20000 की जनसंख्या पर गठित की जाएगी।
- पंचायतों को केवल जनता के विचार जानने की सभा न बनाकर, उन्हें उपलब्ध संसाधनों से स्वयं अपने लिए योजना तैयार करने में सक्षम बनाया जाना चाहिए। जिला परिषद जिले की योजना बनाए। जिला स्तर पर जिला योजना बनाने के लिए समिति का गठन किया जाना चाहिए।
- पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से समाज के कमजोर वर्गों को लाभान्वित करने के लिए कार्यक्रम तैयार करने होंगे।
- जिला परिषद और मण्डल पंचायतों को पर्याप्त रूप से धन हस्तान्तरित किया जाना चाहिए।
- जिले की समस्त विकासपरक गतिविधियों का जिसका संचालन अब तक राज्य सरकार द्वारा किया जाता रहा है अब जिला परिषद द्वारा ही किया जाना चाहिए।
- पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा दिया जाना चाहिए।
- पंचायती चुनाव में राजनीतिक दलों को भाग लेने की सुविधा होनी चाहिए।
- पंचायतों का कार्यकाल 4 वर्ष का होना चाहिए। मंडल और जिला स्तर पर दो ऐसी महिलाओं को भी, जिन्होंने जिला परिषद के चुनावों में अधिकतम मत प्राप्त किए हों, परिषद का सदस्य बनाया जाएगा।

जी.के.वी.राव समिति (1985)

योजना आयोग द्वारा जी.के.वी.राव समिति का गठन 25 मार्च 1985 को किया गया। समिति ने अपनी रिपोर्ट दिसम्बर 1985 को प्रस्तुत की, जिसमें निम्न सुझाव थेः–

- योजनाएं तैयार करने, निर्णय लेने और उसे लागू करने का कार्य पंचायतों को सौंपा जाए, क्योंकि वे जनता के अधिक निकट है।
- जिला स्तर पर एक सदस्य को 30000 से 40000 की जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करना चाहिए। समाज के कमजोर वर्गों और महिलाओं का इनमें पर्याप्त प्रतिनिधित्व होना चाहिए। इसका कार्यकाल आठ वर्ष का होना चाहिए।
- जिला स्तर के सभी कार्यकाल स्पष्ट रूप से जिला परिषद के अधीन होने चाहिए। कृषि, पशुपालन, सहकारिता, लघुसिंचाई, प्राथमिक व प्रौढ़ शिक्षा, लोक स्वास्थ्य, ग्रामीण जल आपूर्ति, जिले की सड़कें, लघु व ग्रामोद्योग, अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति का कल्याण, समाज व महिला कल्याण और सामाजिक वनपालन जिला परिषदों को देने चाहिए।
- कार्य संपादन के लिए जिला परिषदों की विभिन्न समितियां गठित की जानी चाहिए।
- राज्य सरकारों द्वारा दी जाने वाली धनराशि को निर्धारित करने का कार्य वित्त आयोग को दिया जाना चाहिए जिसकी नियुक्ति हर पांच वर्ष के बाद होनी चाहिए।
- जिला स्तर के नीचे पंचायत समिति या मण्डल पंचायतें गठित की जानी चाहिए और इनका गठन और संरचना जिला परिषद जैसी होनी चाहिए। प्रत्येक गांव में ग्राम सभा हो।
- पंचायत समिति या ग्राम व मण्डल पंचायत स्तर पर बच्चों, महिलाओं व प्रौढ़ों के कल्याण के लिए उपसमिति का गठन होना चाहिए।

- जो विभिन्न समाजसेवी संस्थाएं ग्रामों में कार्य कर रही हैं, पंचायतों को विभिन्न समितियों से उनकी सेवाएं लेनी चाहिए।

एल.एम.सिंघवी समिति (1986)

एल. एम. सिंघवी की अध्यक्षता में 16 जून 1986 को पंचायती राज संबंधी प्रपत्र जारी करने के लिए भारत सरकार ने एक समिति बनाई जिसने 27 नवम्बर 1986 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस समिति ने पंचायत का अवलोकन व मूल्यांकन करने के बाद पंचायत राज व्यवस्था को पुनर्जीवित करने के लिए विभिन्न सिफारिशें की। इनमें प्रमुख सिफारिशें पंचायती राज प्रणाली के कुछ पहलुओं को संवैधानिक दर्जा दिया जाना चाहिए था ताकि इन्हें राजनीतिज्ञों और नौकरशाही हस्तक्षेपों से दूर रखा जाए। समिति ने पहली बार पंचायतों से सम्बन्धित संविधान संशोधन विधेयक का मसौदा भी तैयार किया। इस समिति ने लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण पर विशेष बल दिया ताकि जनता अधिक से अधिक पंचायत के कार्यों में सहभागी बन सकें।

64वां संवैधानिक संशोधन विधेयक (1989)

15 मई 1989 को संसद में 64वां संवैधानिक संशोधन विधेयक लाया गया। इस विधेयक के मुख्य प्रावधान निम्न थे:–

- पंचायती राज संस्थाओं का ढांचा त्रिस्तरीय होगा– ग्राम स्तर, ब्लॉक स्तर और जिला स्तर।
- छोटे राज्य जिनकी जनसंख्या 20 लाख से कम है वे द्विस्तरीय ढांचा भी अपना सकते हैं।
- पंचायतों में महिलाओं को 30 प्रतिशत आरक्षण प्राप्त होगा।
- महिलाओं का यह आरक्षण अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति को प्राप्त आरक्षण के अलावा होगा।
- पंचायतों का कार्यकाल 5 वर्ष होगा। यदि किसी पंचायत का निर्धारित अवधि से पूर्व विघटन हो जाता है तो अधिकतम 6 माह के भीतर चुनाव कराना अनिवार्य होगा।
- पंचायती राज संस्थाओं को अपने क्षेत्र के भीतर विकास की योजना का निर्माण करने का अधिकार होगा।
- 64वां संवैधानिक संशोधन विधेयक (1989) लोकसभा में पारित हो गया लेकिन राज्य सभा में पारित न हो सका, फिर भी पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत बनाने में इसने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

पंचायती राज व्यवस्था का नवीन प्रतिमानः 73वां संवैधानिक संशोधन (1992)

संविधान के 73वें संवैधानिक संशोधन विधेयक (1992) ने पंचायती राज व्यवस्था को न केवल नई दिशा दी है, वरन यह लोकतंत्र की जड़ों को सींचने में भी सार्थक सिद्ध हुई हैं। 73वें संवैधानिक संशोधन द्वारा संविधान में एक नया अध्याय 9 जोड़ा गया। अध्याय 9 द्वारा संविधान में 16 अनुच्छेद और एक अनुसूची अर्थात् ग्यारहवीं अनुसूची जोड़ी गई। 24 अप्रैल 1993 को 73वां संवैधानिक संशोधन अधिनियम लागू कर दिया गया।

यद्यपि संविधान के अनुच्छेद 243 छ में पंचायतों के स्वशासन की संस्थाओं के रूप में कल्पना की गई है किंतु शक्तियों और कार्य सौंपने का कार्य विधानमण्डल की इच्छा के अधीन होगा। 73वें संवैधानिक संशोधन की मुख्य विशेषताएं निम्न हैं:–

- ग्राम सभा गांव के स्तर पर ऐसी शक्तियों का प्रयोग करेगी जो राज्य विधानमण्डल विधि बनाकर उपबंध करे।
- अनु. 243 ख त्रिस्तरीय पंचायती राज का प्रावधान करता है। प्रत्येक राज्य में ग्राम स्तर, मध्यवर्ती स्तर और जिला स्तर पर पंचायती राज संस्थाओं का गठन किया जाएगा किंतु उस राज्य में जिनकी जनसंख्या 20 लाख से अधिक नहीं है, वह मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत का गठन करेगा।
- पंचायत के तीनों स्तरों पर सदस्यों का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से होगा लेकिन अध्यक्ष पद के लिए ग्राम पंचायत को छोड़कर मध्य और जिला स्तर पर चुनाव प्रत्यक्ष रूप से चुने सदस्यों द्वारा किया जाएगा। ग्राम पंचायत स्तर पर अध्यक्ष का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से हो या अप्रत्यक्ष रूप से, यह राज्य विधानमण्डल की इच्छा पर छोड़ दिया गया है।
- पंचायत के तीनों स्तरों पर अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के आरक्षण उनकी जनसंख्या के अनुपात में होगा तथा इनमें 1/3 आरक्षण इन वर्गों की महिलाओं का भी होगा।
- पंचायतों के तीनों स्तरों पर कुल सदस्यों व अध्यक्षों में से 1/3 पद महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे।
- पंचायतों का कार्यकाल 5 वर्ष का होगा। पंचायतों को भंग कर दिए जाने की स्थिति में चुनाव 6 माह के अंदर होने जरूरी हैं।
- हर पांच वर्ष में राज्यपाल राज्य वित्त आयोग का गठन करेगा जो पंचायतों को आर्थिक स्थिति सुधारने से सम्बन्धित अनेक सिफारिशें करेगा। पंचायतों का चुनाव कराने और निर्वाचन नामावली तैयार करने के लिए राज्य निर्वाचन आयोग का गठन किया जाएगा।

मुख्यमंत्रियों की बैठक (1997)

पंचायती राज संस्थाओं के कार्यों की समीक्षा करने के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री इन्द्रकुमार गुजराल की अध्यक्षता में 2 अगस्त 1997 को पंचायती राज पर मुख्यमंत्रियों का सम्मेलन विज्ञान भवन, नई दिल्ली में आयोजित किया गया। जिनमें मुख्य सिफारिशें रखी गई जो निम्न हैं:–

- विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के अंतर्गत लाभार्थियों का चयन ग्राम सभा पर छोड़ दिया जाए।
- 10,000 रुपये तक के कार्य के लिए तकनीकी मंजूरी की आवश्यकता को त्याग दिया जाए।
- ग्राम पंचायत को पर्याप्त जनशक्ति सहायता प्रदान करने के लिए नई प्रक्रिया अपनाई जाए।
- ऐसी जनशक्ति पर पूर्ण नियंत्रण का अधिकार ग्राम पंचायत को प्रत्यायोजित किया जाए।
- जिला परिषद के अध्यक्ष को जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों का अध्यक्ष बनाया जाए।
- निलम्बन या बर्खास्तगी से पूर्व पंचायती राज संस्थाओं को सुनवाई के लिए उचित अवसर प्रदान किया जाए।
- ग्राम पंचायत का अध्यक्ष केवल ग्राम सभा के प्रति उत्तरदायी हो।
- जिला आयोजन समितियों को शीघ्रता से गठित किया जाए।

पंचायती राज : वर्तमान स्थिति का मूल्यांकन

स्वतंत्र भारत में पंचायती राज व्यवस्था पांच दशक पश्चात् किस हद तक सफल हुई और किस हद तक विफल यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न हमारे समक्ष है, क्योंकि भारत की आर्थिक और सामाजिक संरचना में विकास के संदर्भ में न्याय की जिस अवधारणा को हमने इस व्यवस्था का उद्देश्य निर्धारित किया था उसके हम कितने पास और कितने दूर खड़े हैं इसका मूल्यांकन ही पंचायती राज व्यवस्था की सार्थकता को प्रस्तुत करता है।

भारत में पंचायती राज की अवधारणा नई नहीं है किंतु वर्तमान परिस्थितियों में उसके उद्देश्य ज्यादा नवीन एवं महत्वपूर्ण हो गये हैं। सामाजिक आर्थिक न्याय की अवधारणा को वास्तविक स्वरूप प्रदान करने के लिए पंचायती राज व्यवस्था जिन उद्देश्यों को लेकर आगे बढ़ी उनमें एकता और विकास दो अहम बिंदु थे। ग्रामीण समाज की जिस एकता, सांप्रदायिक सौहार्द, सहभागिता, लोकतांत्रिक मूल्यों, सत्ता में भागीदारी, आत्म निर्भरता, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व की भावना को लाने का प्रयास किया गया उसमें पंचायती राज व्यवस्था अभी एक सीमा तक सफल हुई है। वित्तीय आत्मनिर्भरता के कारण आज लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की यह पद्धति स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करने में भरपूर योगदान दे रही हैं। इस पद्धति के माध्यम से पंचायतों को दिए गए अधिकारों के प्रयोग से धरातलीय विकास का स्वरूप लगातार बदल रहा है किंतु इसकी गति अभी भी मानकों से दूर है।

73वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम (1992) द्वारा 11वीं अनुसूची में पंचायतों को संवैधानिक दर्जा प्रदान करते हुए बुनियादी विकास के जिन 29 विषयों जैसे– कृषि, भूमि विकास, लघु सिंचाई, पशुपालन, मत्स्य उद्योग, सामाजिक वानिकी, लघु वन उपज, लघु उद्योग, खादी, ग्रामीण आवास, पेयजल, ईंधन और चारा, सड़कें, ग्रामीण विद्युतीकरण, गैर पारम्परिक ऊर्जा स्रोत, गरीबी उन्मूलन, शिक्षा, तकनीकी प्रशिक्षण, प्रौढ़ शिक्षा, पुस्तकालय, सांस्कृतिक क्रिया कलाप, बाजार और मेले, स्वास्थ्य, परिवार कल्याण, महिला एवं बाल विकास, सामाजिक कल्याण, दुर्बल वर्गों का कल्याण, सार्वजनिक वितरण प्रणाली और सामुदायिक संपत्ति का अनुरक्षण का दायित्व सौंपा गया है। इन दायित्वों के निर्वहन में पंचायतों में कमजोर तबके एवं महिलाओं की छुपी ऊर्जा द्वारा उद्देश्यों को प्राप्त करने की कोशिश की। जहां पंचायतों द्वारा प्रभावी ढंग से कार्य संचालन कर विभिन्न आकांक्षाओं को पूरा किया गया वहीं समाज को जागरूक, जुझारू एवं मेहनतशील बनाने का प्रयास किया गया। पंचायतों का सबसे महत्वपूर्ण पहलू अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ा वर्ग एवं सामान्य वर्ग की महिलाओं को सत्ता में भागीदार बनाकर इन तबकों में महिला सशक्तिकरण का प्रयास किया गया। आज ग्रामीण महिलाओं का दखल चूल्हे–चौके तक सीमित न रहकर राजनैतिक एवं सामाजिक क्षेत्रों के नीति निर्माण में अहम बनता जा रहा है। देश की आबादी का 50 प्रतिशत हिस्सा महिलायें, यद्यपि 1/3 भाग ही पंचायती राज प्रावधानों के अनुसार विकास के आर्थिक–सामाजिक क्षेत्र में सहभागी बन पा रही हैं तब भी इसको एक बेहतरीन शुरूआत कहा जा सकता है।

गांव की चौखट पर आज विभिन्न समस्याओं का दिन–प्रतिदिन के प्रयासों से निदान हो रहा है। पंचायती प्रयासों एवं राष्ट्रीय सरकार के माध्यम से समस्त ग्रामीण क्षेत्रों को सम्पर्क मार्गों से जोड़ा जा रहा है। इसका उदाहरण प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना है, जिसने ग्रामीण समाज को न केवल गतिशील बनाने का प्रयास किया वरन बेरोजगारी जैसी विकराल समस्या को भी दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उपेक्षित और पिछड़ा क्षेत्र माने जाने वाला भारतीय ग्रामीण समाज जिसमें काम का विकल्प केवल पलायन माना जाता था उसी समाज में आज रोजगार की गारंटी का बिगुल बज चुका है। सही मायनों में पंचायती राज संस्थाओं द्वारा भारत के विकास को नया स्वरूप प्रदान किया जा रहा है। केवल शहरों को संसाधनों को केन्द्र मानने वाले आज ग्रामीण क्षेत्रों को भी तवज्जो दे रहे हैं। आज बहुराष्ट्रीय कंपनियां पंचायतों के प्रयासों से अनुकूल बनती जा रही है। आधारभूत संरचना के कारण ग्रामीण क्षेत्रों का रुख कर रही हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के बुनियादी ढांचे में आमूलचूल परिवर्तन करने के लिए भारत निर्माण की योजना जिसके छः क्षेत्र–ग्रामीण विद्युतीकरण, जल आपूर्ति, सड़कें, आवास, संचार और सिंचाई का दायित्व भी ग्राम पंचायतों

की सक्रियता पर ही निर्भर करेगा। निःसंदेह आज पंचायती राज व्यवस्था ग्रामीण विकास की नई तस्वीर प्रस्तुत करता आइना बनता जा रहा है जिसमें उसकी सफलता एवं विफलता के भाव भी उजागर हो रहे हैं। पंचायती राज के संचालन में आ रही समस्याओं की ओर ध्यान आकृष्ट करना भी प्रासंगिक होगा।

वर्ष 1959 के पश्चात् पंचायती राज अपने क्रमिक विकास को प्राप्त करता आ रहा है, यद्यपि आरम्भ से ही इसके स्वरूप एवं क्षेत्र को लेकर नीति निर्माताओं के मन में असमंजस्य की भावना बनी रही। पंचायती राज की सफलता पर उठी शंका का निदान सरकारी प्रयासों के अथक परिश्रम के पश्चात् 34 वर्षों बाद 73वें संवैधानिक संशोधन (1992) से हुआ जिसने भारत के ग्रामीण समाज में राजनीतिक सहभागिता को सामाजिक–आर्थिक विकास की दहलीज तक पहुंचाने का कार्य किया। पंचायती राज ढांचे में स्थायित्व लाने और विकास का प्रतिमान बनाने की दिशा में जहां यह मील का पत्थर साबित हो रहा है वहीं इसके संचालन से कुछ समस्यायें भी उभर रही हैं। सामाजिक एकता के स्वरूप की संकल्पना जो गांधी जी ने देखी थी वह आज पंचायतों में दलीय राजनीति के कारण कसौटी पर खरी नहीं उतर रही है। राजनीति जिसको विकास का एक सशक्त हथियार माना जाता है वही गांव में दलगत राजनीति को बढ़ावा देकर वैमनस्य की भावना उत्पन्न कर रहा है। आज ग्रामीण क्षेत्रों से पंचायतों में आने वाले प्रतिनिधि बहुमत के आधार पर निर्वाचित तो हो जाते हैं किंतु वे सम्पूर्ण गांव का प्रतिनिधित्व नहीं कर पाते। ग्राम प्रधान उन्हीं लोगों के विकास को प्राथमिकता देता है जिन्होंने उसके पक्ष में मत प्रकट किया हो। ऐसे में राजनैतिक सहभागिता एवं ग्रामीण विकास का एकमात्र स्रोत ग्राम प्रधान की मनोवृति पर आधारित हो जाता है। उसके राजनैतिक एवं सामाजिक मूल्य ही गांव के विकास और पिछड़ेपन के मानक बन जाते हैं।

जातिगत समाज होने के कारण चुनाव जीतना ग्रामीण पृष्ठभूमि में अहम का मुद्दा बन जाता है। जिसके कारण गांव की राजनीति जातीय प्रतिद्वन्द्विता में सिमट जाती है। विकास के मुद्दे प्रायः गौण हो जाते हैं। ऐसे में यदि दलित–पिछड़े लोगों के उत्थान की बात की जाए तो यह बेइमानी है। महिलाओं की स्थिति में पंचायती राज से जिस सुधार की अपेक्षा की गई थी उससे उन्हें सत्ता में आने का मौका तो मिला लेकिन निर्णय का अधिकार नहीं मिल पाया। शोध में पाया गया कि पुरुष प्रधान मानसिकता की स्पष्ट छाप पंचायती राज की धरातलीय सच्चाई पर देखने को मिलती है। आज हमने विभिन्न वर्गों की महिलाओं को ग्राम प्रधान, अध्यक्ष क्षेत्र पंचायत (प्रमुख), अध्यक्ष जिला पंचायत जैसे महत्वपूर्ण ओहदों पर बैठा तो दिया परंतु हमने ऐसे पद पंचायती राज व्यवस्था में बना लिए हैं जो महिलाओं को अपनी क्षमताओं के अनुसार कार्य एवं निर्णय लेने से दूर रख रहे हैं। जैसे – प्रधानपति, प्रमुखपति, जिला पंचायत अध्यक्षपति आदि। यह भी संज्ञान में आया है कि शिक्षा और जागरूकता के अभाव में महिलायें समाज के कठोर नियमों का पालन करती हैं जिसके कारण वे अपने अधिकारों का प्रयोग स्वयं न करके पति, पड़ोसी या रिश्तेदारों के माध्यम से करते हैं।

आये दिन पंचायती राज संस्थाओं में काम करने वाले लोगों के विरूद्ध शासन और प्रशासन को शिकायती पत्र प्राप्त होते रहते हैं। तहसील दिवसों या जनता दरबार में प्राप्त होने वाली शिकायतों का लगभग 70 प्रतिशत विभिन्न मामलों में पंचायतों से सम्बन्धित होता है। कतिपय मामलों को छोड़कर ऐसा कोई प्रधान या प्रमुख या अध्यक्ष नहीं होता जिसका अपने कार्यकाल के दौरान या समाप्ति पर गंभीर अनियमितताओं का सामना न करना पड़ता हो।

ग्रामीण राजनीति भी आज भ्रष्टाचार एवं पक्षपात पूर्ण रवैये का गढ़ बनती जा रही है। ऐसा महसूस होता है कि लोग केवल पांच वर्षों को अपनी आय के साधन के रूप में देखते हैं। ऐसे मामले भी संज्ञान में आए हैं जिनमें इंदिरा आवास (पूर्ण एवं अपग्रेडेशन), शौचालय निर्माण, ऋण–अनुदान, जाति प्रमाण पत्र, अधिवास, छात्रवृत्ति, नाली खडंजा निर्माण आदि योजनाओं में ग्राम प्रधानों एवं ग्राम विकास अधिकारी द्वारा मनमाने ढंग से रिश्वत की मांग की जा रही है। गरीब और असहाय लोग इन ज्यादतियों को मौखिक एवं गुप–चुप रूप से स्वीकार करते हैं किंतु कोई लिखित शिकायत नहीं करते जिससे लगभग 50 प्रतिशत मामले संज्ञान में ही नहीं आ पाते। चुनाव के दौरान विजयी होने के लिए सभी प्रकार के प्रलोभन जैसे धन वितरण, कपड़ा, अनाज, शराब और मांस आदि का प्रयोग खुलकर किया जाता है।

उपरोक्त समस्याओं का निराकरण संभव है जो निम्न प्रकार से हो सकता है :–

- राजनीति को लेकर ग्रामीण पृष्ठभूमि में व्याप्त गुटबंदी को समाप्त कर पंचायती राज व्यवस्था का निर्वाचन राजनीतिक दलों के आधार पर न हो।
- चुनाव से पूर्व और पश्चात्, किसी भी प्रकार के सामाजिक भोज जो चुनाव को प्रभावित करता हो उस पर पूरी तरह से रोक होनी चाहिए।
- मतदान को अनिवार्य बना दिया जाए और उसमें भाग न लेने वालों से दण्ड के रूप में कर वसूल किया जाए।
- पंचायतों के निर्वाचन में भाग लेने वाले उम्मीदवारों की संपत्ति का ब्यौरा निर्वाचित होने के तुरन्त पश्चात् लिया जाना चाहिए और पांच वर्ष के उनके कार्यकाल के पश्चात् तुलनात्मक अध्ययन कर समीक्षा की जानी चाहिए। यह कार्य आयकर विभाग के विशेष सेल के माध्यम से किया जाना चाहिए।

- आज शिक्षा की आवश्यकता प्रत्येक क्षेत्र में महसूस हो रही है। अतः शैक्षणिक योग्यता के मानक को अविलम्ब लागू करना चाहिए।
- सरकारी अधिकारियों का रवैया पंचायतों के प्रति उदार एवं पथ प्रदर्शक के रूप में होना चाहिए।
- निर्वाचित सदस्यों को अगले पांच वर्ष तक आजीविका के लिए सम्मानजनक वेतन और भत्ते दिए जाए जिससे वे अनैतिक साधनों से विमुख हों।
- सूचना के अधिकार 2005 के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रों को स्पष्ट करते हुए एक व्यापक जागरूकता अभियान चलाया जाए जिसमें शिक्षक, अधिवक्ता और विशेषज्ञ क्रांतिकारी योगदान दे सकें।
- पंचायतों के निर्वाचित प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण के साथ–साथ संपूर्ण ग्राम सभा का भी प्रशिक्षण वर्ष में एक बार अनिवार्य रूप से कराया जाए ताकि वे भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो सके।
- राजस्थान और आंध्र प्रदेश के पंचायती राज व्यवस्था अधिनियम में यह प्रावधान किया गया है कि दो से अधिक संतान पैदा करने वाले व्यक्ति को चुनाव के अयोग्य माना जाए। इसका पालन कठोरता से सम्पूर्ण भारत में करवाया जाए।
- पंचायती राज व्यवस्था को उनकी आवश्यकतानुसार आय के साधन प्रदान किए जाएं ताकि उन्हें स्थानीय कर लगाने की स्वतंत्रता हो। राज्य सरकार को ऐसा कर नहीं लगाया जाना चाहिए जिससे पंचायती राज संस्थाओं को हानि पहुंचे।
- अलग–अलग राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं के नाम और महत्व को एक जैसा कर देना चाहिए जिससे साधारण व्यक्ति भी इन्हें सुगमता से समझ सके।
- भारत में औद्योगिकीकरण को गति देने के लिए बनाए जा रहे विशेष आर्थिक क्षेत्रों में पंचायतों को निर्णय का अधिकार दिया जाए जिससे भूमि अधिग्रहण में सरकार को ग्रामीणों के विरोध का सामना न करना पड़े।
- सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन से पूर्व नौकरशाहों को चाहिए कि सम्बन्धित ग्राम पंचायत के साथ उदार एवं खुले विचारों से योजना के लाभ और हानियों पर मंथन कर लिया जाए।

निष्कर्ष

पंचायती राज व्यवस्था में अनेक खामियों के बावजूद इसके महत्व को नकारा नहीं जा सकता। पंचायतों के चुनावों ने समाज में राजनीतिक चेतना उत्पन्न की है और राजनीतिक भागीदारी में वृद्धि भी हुई है। आवश्यकता इस बात की है कि सांप्रदायिकता, भ्रष्टाचार, गुटबंदी आदि बुराइयों को दूर किया जाए। इन सभी बुराइयों को दूर करने के लिए सरकार प्रत्येक स्तर पर जागरूकता लाने का भरसक प्रयास कर रही है। सबसे अहम पहलू यह है कि पंचायती राज व्यवस्था महिलाओं की भागीदारी का एक सशक्त माध्यम बनकर उभरा है। पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत आधार देने के लिए सरकार ने 27 मई 2004 को अलग से पंचायती राज मंत्रालय की स्थापना की है। जिसके फलस्वरूप पंचायती राज व्यवस्था के अन्दर जो भी समस्याएं दिखाई दे रही है उनको दूर करने के लिए आवश्यक और नियमित कदम उठाये जा रहे हैं।

आज जब पंचायतों के माध्यम से लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की शासन प्रणाली कार्यरत है जिसमें समाज के सभी वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित की गई हैं। आवश्यकता इस बात की है कि ये पंचायती राज संस्थायें अपने अपने अंतर्निहित उद्देश्यों के अनुरूप सामाजिक न्याय और आर्थिक विकास की दिशा में प्रयास करें जिससे एक समतामूलक समाज की स्थापना संभव हो सके और सामाजिक तथा आर्थिक न्याय प्राप्त किया जा सके।

पंचायती राज द्वारा जिन उद्देश्यों को प्राप्ति का लक्ष्य निर्धारित किया गया है उसमें आ रही समस्याओं के निराकरण की दिशा में सूचना का अधिकार 2005 एक क्रांतिकारी कदम साबित हो रहा है। इस अधिकार से जहां पंचायती राज संस्थाओं के क्रियाकलापों पर आम आदमी का नियंत्रण होगा वहीं संस्थाओं में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व की भावना का विकास भी होगा। पंचायतों को और अधिकार देने की आवश्यकता है। खासतौर से विशेष आर्थिक क्षेत्रों के निर्माण में उनकी भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है ताकि विकास को बाध्यकारी न बनाकर ऐच्छिक या स्वाभाविक बनाया जा सके। यह कार्य कठिन अवश्य है किंतु असंभव नहीं। इसी राह पर चलकर गांधीजी के आदर्शों वाले सशक्त ग्रामीण भारत का निर्माण संभव होगा। सही मायनों में ग्राम स्वराज्य की कल्पना अपने वास्तविक स्वरूप को प्राप्त कर सकेगी जिसको गांधीजी ने व्यक्त करते हुए कहा था, "प्रत्येक गांव एक ऐसा परिपूर्ण गणराज्य होना चाहिए जो अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपने पड़ोसियों पर आश्रित न हो।" अर्थात् गांव आत्मनिर्भरता के केन्द्र बनने चाहिए ताकि अंतिम पंक्ति में खड़ा व्यक्ति पंचायती राज के उद्देश्यों से लाभान्वित हो सके। इस कसौटी पर खरा उतरना पंचायती राज संस्थाओं के समक्ष चुनौती है।

(लेखक राजनीति विज्ञान के प्रवक्ता हैं)
राजकीय महाविद्यालय, चौबट्टाखाल (पौड़ी), उत्तराखंड

पंचायती राज और महिला सशक्तिकरण

सुभाष सेतिया

स्वतंत्र भारत की कुछ उल्लेखनीय उपलब्धियों की जब चर्चा की जाती है तो उनमें जिस उपलब्धि के बारे में सबकी एक राय है वह देश में लोकतंत्र का बना रहना। हमारे पड़ोस के अनेक देश लोकतंत्र के प्रयोग में विफल रहे हैं और वहां लोकतंत्र हिचकोले खाता नज़र आता है। लेकिन भारत पिछले 60 वर्षों से निरंतर लोकतंत्र की राह पर आगे बढ़ता रहा है।

पंचायती राज में महिलाओं की बढ़ती भूमिका एक अच्छा संकेत

आपातकाल के 19 महीनों को छोड़ दें तो लोकसभा और विधानसभा के चुनाव हमेशा समय पर और स्वतंत्र व निष्पक्ष रूप से होते रहे हैं और सत्ता को बदलने की प्रक्रिया शांति के साथ संवैधानिक तरीके से पूरी होती रही है। इसका असर यह हुआ है कि देश के विकास में आमजन की भागीदारी बढ़ी है तथा उपेक्षित और वंचित वर्गों की हालत सुधारने की दिशा में काफी प्रगति हुई है। किंतु लोकतंत्र तब तक सफल नहीं होगा जब तक सत्ता और विकास के लाभ गांवों तक नहीं पहुंचते।

गांधी जी मानते थे कि सच्चा लोकतंत्र वही है जो निचले स्तर पर लोगों की भागीदारी पर आधारित हो। यह तभी सभंव है जब गांव में रहने वाले आम आदमी को भी शासन के बारे में फैसला करने का अधिकार मिले। अपनी मृत्यु से करीब दो सप्ताह पहले गांधी जी ने अपने पत्र 'हरिजन' में लिखा था– सच्चे लोकतंत्र का परिपालन केन्द्र में बैठे 20 व्यक्तियों द्वारा नहीं हो सकता। इसका क्रियान्वयन हर गांव के लोगों के द्वारा ही होना चाहिए। मेरे विचार में लोगों की चुनी हुई पंचायत को काम करने से कोई भी कानून नहीं रोक सकता। भारत में नियोजित विकास की प्रक्रिया के प्रारंभ से ही ग्राम स्तर पर काम करने और विकास में स्थानीय लोगों की सहभागिता को बढ़ावा देने के लिए पंचायती राज को बढ़ावा दिया गया। इस व्यवस्था को अपनाने का एक कारण यह भी था कि पंचायत की अवधारणा हमारे समाज में कई सदियों से मौजूद रही है और पंचायतों के प्रति विश्वास और सम्मान का भाव परंपरा से बना हुआ है। किंतु वास्तविक अर्थों में पंचायतों को अधिकार देने के लिए हमारी नौकरशाही तैयार नहीं थी और राजनीतिक इच्छा शक्ति के अभाव में कई वर्षों तक पंचायती राज व्यवस्था व्यावहारिक स्तर पर लगभग निष्प्रभावी बनी रही।

पंचायती राज व्यवस्था में नए खून का संचार हुआ 73वें संविधान संशोधन के बाद जिससे पंचायती संस्थाओं का स्वरूप और कार्यप्रणाली ही नहीं बदली उनकी, संरचना और कार्यकुशलता में क्रांतिकारी परिवर्तन आ गया। स्वर्गीय प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने संविधान कानून में कई नए और साहसिक प्रावधान जोड़कर पंचायती संस्थाओं को अधिकार संपन्न और सक्रिय बनाया। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि 1993 में इस कानून के लागू हो जाने के बाद देश में सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दिशा में एक नए युग का सूत्रपात हो गया। इससे जहां गांवों में सत्ता समीकरणों में सदियों से चली आ रही जड़ता को तोड़ने में मदद मिली, वहीं नियमों में लचीलापन भी रखा गया ताकि स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप इनमें थोड़ा बहुत फेर–बदल करके कारगर ढंग से लागू किया जा सके। इस संशोधन के लागू होने से पहले कई राज्यों में दशकों से पंचायतों के चुनाव नहीं हो रहे थे लेकिन इसमें पांच वर्ष बाद चुनाव प्रत्यक्ष चुनाव पद्धति से कराने की व्यवस्था की गई। यही नहीं पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव की देखरेख करने और मतदाता सूचियां बनाने के लिए स्वतंत्र चुनाव आयोग बनाया गया है। जिससे चुनावों पर राज्य सरकारों और सत्ताधारी वर्गों के प्रभाव को कम करने में मदद मिली है। किंतु इस कानून की सबसे बड़ी विशेषता थी सभी पंचायती राज संस्थाओं में

अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुरूप सीटों का आरक्षण। इससे भी बड़ा क्रांतिकारी प्रावधान था कुल सीटों की एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित करना।

सच तो यह है कि जब महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटों का प्रावधान किया गया था तो किसी ने नहीं सोचा था कि यही एक कदम ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण और गांवों की स्थिति सुधारने के लिए इतना महत्त्वपूर्ण बन जाएगा। पिछले 15 वर्षों का अनुभव बताता है कि राजीव गांधी ने गांवों के परंपरागत ढ़ाचे में उपेक्षित और वंचित वर्गों को सत्ता का भागीदार बनाने का जो सपना देखा था वो सामाजिक दृष्टि से अत्यंत क्रांतिकारी सिद्ध हुआ है। निर्णय लेने की प्रक्रिया और सत्ता संचालन में भागीदारी मिलने से स्वयं महिलाओं का ही नहीं समूचे ग्रामीण क्षेत्र का काया पलट करने में मदद मिल रही है।

जैसा कि हमारे समाज में होता है शुरू–शुरू में पंचायतों में गांवों के प्रभावशाली लोगों ने अपनी पत्नियों, बहनों और रिश्तेदारों को चुनाव में उतारकर समझ लिया कि वे उनके इशारों पर चलेंगी। किंतु एक बार सत्ता का हिस्सा बनने के बाद महिला पंच और सरपंच औरतों से जुड़े मुद्दों के साथ–साथ सामान्य विकास के कार्यों में दिलचस्पी लेने लगीं और ग्रामीण लोगों के सामाजिक समीकरण भी बदलने लगे। धीरे–धीरे पंचायती राज संस्थाओं का स्वरूप बदल रहा है। जो संस्थाएं पहले समाज के प्रभुत्ववर्ग की इच्छाओं और आकांक्षाओं की पूर्ति का माध्यम हुआ करती थी अब वे सच्चे अर्थों में ग्राम स्वराज की इकाई बनती दिखाई दे रही है।

संयुक्त राष्ट्र की एजेंसी यू.एन.एफ.पी.ए. ने अपनी ताजा रिपोर्ट में भारत में पंचायतों में आरक्षण के फलस्वरूप महिलाओं में उपजी नई चेतना की सराहना की है। आज सभी राज्यों में पंचायतों के माध्यम से महिलाएं नए उत्साह और स्फूर्ति के साथ विकास गतिविधियों में योगदान दे रही है। पिछले दशक के प्रारंभ में महिलाओं को आरक्षण मिलने के बाद करीब 25 हजार महिलाएं पंचायतों के लिए चुनी गई थी परन्तु आज देश भर में लगभग 10 लाख महिलाएं पंच, सरपंच तथा अन्य पदों पर चुनी जाकर ग्रामीण शासन को नई दिशा दे रही हैं। पंचायतों में कुल 28 लाख प्रतिनिधियों में से लगभग 10 लाख महिलाएं हैं। बिहार सरकार ने पंचायतों में महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत सीटें आरक्षित कर दी हैं। पंचायती राज व्यवस्था की मध्यावधि समीक्षा के अनुसार एक दिसम्बर 2006 में तो पंचायतों में महिलाओं का कुल प्रतिनिधित्व 36.7 प्रतिशत था। राज्यों में बिहार 54.1 प्रतिशत के साथ सबसे आगे और कर्नाटक 42.1 प्रतिशत के साथ दूसरे स्थान पर था। अकेला गोवा राज्य ऐसा है जहां महिलाओं का प्रतिनिधित्व एक तिहाई से कम यानी 30.1 प्रतिशत है। बाकी सभी राज्यों में महिला प्रतिनिधित्व का प्रतिशत 33 को पार कर गया है। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि शुरू में महिला आरक्षण और उसके चुनाव का मज़ाक उड़ाया जाता था और पुरुषों की कठपुतली मानकर उन्हें गंभीरता से नहीं लिया जाता था किन्तु अब महिलाओं को अपनी क्षमताओं का एहसास हो गया है और वे कुछ कर दिखाने तथा अपनी पहचान बनाने के लिए अपनी इच्छा से चुनाव लड़ रही हैं। इनमें अनुसूचित जातियों और जनजातियों की महिलाएं भी आगे आ रही हैं। हरियाणा में एक पंचायत ऐसी भी है जिसके सभी पदों पर महिलाएं विराजमान हैं। फिरोज़पुर झिरका की नीमखेड़ा पंचायत इस उपलब्धि के कारण चर्चा का विषय बन गई है।

सत्ता में भागीदारी की यह मात्रा केवल संख्या या अनुपात तक सीमित नहीं है। पंचायतों में ग्रामीण महिलाओं की उपस्थिति से उनमें आत्म–विश्वास बढ़ा है और उन्हें पहली बार एहसास हुआ है कि चूल्हा–चौका और बच्चे पालने के साथ–साथ वे अपने गांव और समाज के लिए ऐसे काम भी कर सकती हैं जिनके लिए पुरुष शासित समाज ने पहले कभी उन्हें मौका ही नहीं दिया। मध्यावधि समीक्षा की रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि महिला प्रतिनिधि पंचायतों का बजट तैयार करने की जिम्मेदारी सफलतापूर्वक निभा रही है। इसमें घरेलू बजट तैयार करने का उनका अनुभव और सूझबूझ काम आ रही है। इसमें यह भी कहा गया है कि बजट तैयार करते हुए वे उन कार्यों को अधिक महत्व देती हैं जो महिलाओं के उपयोग के हैं। इस प्रकार महिलाओं के प्रति

ग्राम पंचायत बजट पर चर्चा में भाग लेती हुई महिला पंच

अभी तक चले आ रहे भेदभाव को दूर करने में मदद मिल रही है। यह भी देखने में आया है कि पंचायत की पदाधिकारी बनने से घर–परिवार में और आस–पास उनका सम्मान बढ़ गया है और जो मर्द पहले औरतों के सुझावों की अनदेखी करते थे वे अब उनकी बातों को गंभीरता से लेते हैं और उनसे समानता का बर्ताव करते हैं। इस नए सम्मान और प्रतिष्ठा के चलते महिलाएं गांवों के छोटे–मोटे झगड़े और विवाद भी निपटाने लगी है। जहां महिलाएं सरपंच चुनी गयी हैं वहां पंचायतों के कामकाज में काफी सुधार देखा गया है। पंचायतों में भ्रष्टाचार पर रोक लगाने में मदद मिली है। इसके अलावा सरकारी कल्याणकारी तथा रोजगार देने वाले कार्यक्रमों को अधिक मुस्तैदी से लागू किया जा रहा है।

ज़ाहिर है कि सत्ता क्षेत्र में पहली बार पदार्पण करने के कारण बहुत–सी महिला पंच या सरपंच अनुभवहीन है। उन्हें सरकारी नियम–कायदों और कानूनों की सम्यक जानकारी नहीं है। कई सदस्य अशिक्षित भी होते हैं। इस कमी को दूर करने के लिए राज्य सरकारें उनके लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाती हैं जिनमें शामिल होकर विभिन्न नियमों–कानूनों की जानकारी पाने के साथ–साथ वे एक दूसरे के अनुभव बांट सकती हैं। इससे वे विभिन्न समस्याओं से निपटने के अलग–अलग तरीकों को समझ सकती हैं। इस तरह के प्रशिक्षण कार्यक्रमों को सुचारू तथा व्यापक बनाने की ज़रूरत है।

महिला पंचों और सरपंचों को जहां अवसर मिले हैं, वहां उनके सामने अनेक चुनौतियां भी हैं। उनके हर कदम पर आलोचनात्मक नज़र रहती है। उनकी अपनी परंपरावादी सोच और पुरुष सत्तावादी समाज भी उनके आगे बढ़ने में बाधक बन सकते हैं। इसलिए उन्हें संभल–संभल कर और पूरे आत्म–विश्वास के साथ काम करना होगा। उनसे कई अपेक्षाएं हैं। सबसे पहला काम है गांवों में महिला साक्षरता को बढ़ावा देना। प्राथमिक विद्यालयों की स्थिति ठीक हो, वहां अध्यापकों की नियुक्ति हो, दोपहर के भोजन की सही व्यवस्था हो, लड़कियों को स्कूल भेजने में मां–बाप कोताही न करें, इन सब बातों पर महिला प्रतिनिधियों को विशेष ध्यान देना होगा। इसी तरह आंगनबाड़ियां सही ढंग से चलें, महिलाओं के लिए रोजगार परियोजनाओं तथा स्वरोजगार के प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संचालन सही तरीके से हो, आपदाओं के समय सहायता वितरण में भ्रष्टाचार न हो इन सब पहलुओं पर भी नजर रखनी होगी। पंचायतों के महिला प्रतिनिधियों को ग्रामीण भारत में दीप स्तंभ की तरह चारों ओर चेतना और कार्यकुशलता की रोशनी फैलानी होगी। लड़कियों से भेदभाव और भ्रूण हत्या जैसी नई पनप रही समस्याओं का मुकाबला भी उन्हें करना होगा। ज़ाहिर है कि ये सभी दायित्व निभाना सरल नहीं है।

असल में किसी ने कल्पना भी नहीं की थी कि पंचायतों में महिलाओं का आरक्षण उनके सशक्तिकरण और ग्रामीण समाज के चहुंमुखी विकास की संभावनाओं के इतने द्वार खोल देगा। इसमें कोई शक नहीं कि अपेक्षाएं बहुत हैं किंतु महिलाओं में क्षमताओं और ऊर्जा का कोई अभाव नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि सरकार, नौकरशाही तथा समाज उनका साथ दे और उन्हें उचित प्रशिक्षण, प्रोत्साहन और मार्गदर्शन मिलता रहे। जैसे–जैसे महिला साक्षरता का प्रतिशत बढ़ेगा वैसे–वैसे महिला पंच और सरपंच अधिक विश्वास व कार्यकुशलता के साथ गांवों में सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन को बेहतर बनाने में अपनी भूमिका बढ़ाएंगी। यही नहीं, पंचायतें उनके भावी राजनीतिक जीवन का पालना सिद्ध होंगी और यहां के अनुभव के बल पर वे अपने आपको विधानसभाओं और लोकसभा में जाने के लिए तैयार कर सकेंगी। संसद और विधानसभाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का विधेयक देर–सवेर पारित होना ही है।

(लेखक भारतीय सूचना सेवा के सेवा निवृत वरिष्ठ अधिकारी हैं)
ई–मेलः setia_subhash@yahoo.co.in
सी–302, हिंद अर्पाटमेंट्स, प्लाट नं. 12, सैक्टर 5, द्वारका, नई दिल्ली–110075

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। कुरुक्षेत्र में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख संपादक, कुरुक्षेत्र कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

पंचायतों पर मंडराते खतरे

वेद प्रकाश अरोड़ा

बात गत वर्ष जून महीने की है। बिहार के कटिहार जिले में हाथ में कटोरा लिए दर–दर भीख मांगने वाली एक अनजान अनपहचानी भिखारिन हलीमा खरतून ने किराडा पंचायत के चुनाव में 15 उम्मीदवारों के बहुकोणीय मुकाबले में विजयी होकर पंचायती राज इतिहास में नया अध्याय जोड़ दिया। उसने सिद्ध कर दिखाया कि अगर फटेहाल, जिंदगी से बेहाल, गरीब एकजुट होकर जब कोई काम करने का बीड़ा उठा लें, तो कोई भी ताकत उन्हें आगे बढ़ने और एक नया इतिहास रचने से रोक नहीं सकती। इससे पहले उत्तर प्रदेश में गाजीपुर ने 60 प्रतिशत महिलाओं को पंच निर्वाचित कर आरक्षण–अनारक्षण के सभी रिकार्ड तोड़ कर एक नया कीर्तिमान स्थापित किया।

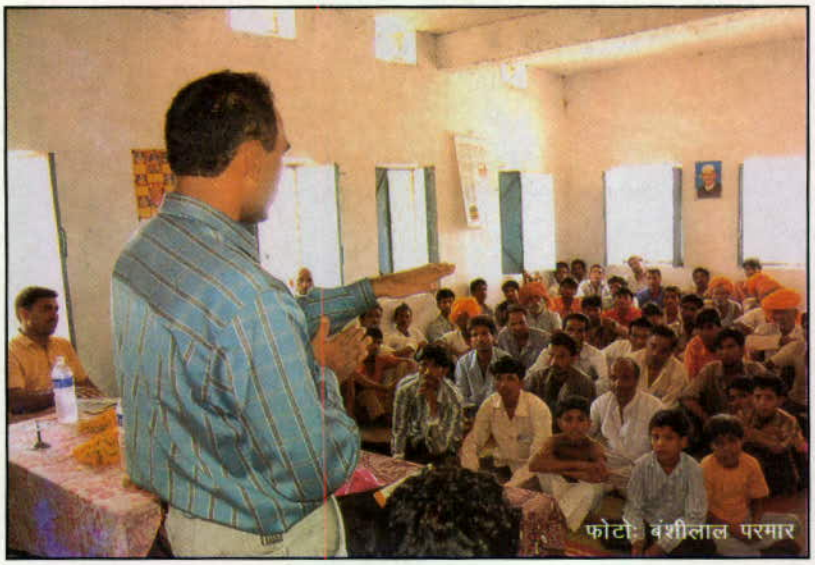

ग्राम पंचायत को संबोधित करते हुए कृषि वैज्ञानिक

एक नये निराले ढंग का कीर्तिमान तमिलनाडु के दक्षिण अरकाट क्षेत्र में पुरंगानी नाम की पंचायत और उसके मुखिया मंगल पड्लयाची के परिवार ने कायम किया है। ब्रिटेन की महारानी विक्टोरिया के जमाने में भारत में गोरों के सम्राज्यवादी शासन की स्थापना से लेकर वर्तमान सरकार के समय तक दो शताब्दियों में न जाने कितनी सरकारें आयी और कितने ऊंचनीच भरे परिवर्तन हुए लेकिन इस गांव की पंचायत के अस्तित्व को न तो कोई आंच आई है और न उस पर पडलयाची के वंशजों के मुखिया पद पर एक के बाद दूसरे चुनाव में कोई विराम पड़ा है और न कोई खलल। आज भी इसी वंश की राजलक्ष्मी अम्माल को मुखिया पद पर बने रहने का गौरव प्राप्त है। इस पंचायत के दायरे में आने वाले छोटे–छोटे चार गांवों में कुल 475 परिवार रहते हैं लेकिन इनमें से 50 में टी वी सैट लगे हैं जिस के कारण वहां खूब चहल–पहल रहती है। मामूली वार्षिक अनुदान मिलने के बावजूद पंचायत ने बोरवेल से 24 घंटे जल सप्लाई का रिकार्ड भी पेश किया है।

सच तो यह है कि इस विशाल देश का पंचायती राज विश्व के बुनियादी ग्राम गणतंत्रों में सबसे बड़ा और सबसे अनूठा है। यह विश्व का एक ऐसा आठवां आश्चर्य है जो छोटे से छोटे गांव और उसमें रहने वाले बुझे बदनसीब लोगों तक को लोकतांत्रिक सरकार से जोड़ने की महत्त्वपूर्ण कड़ी है। इसका श्रेय जाता है वर्ष 1992 के 73वें संविधान संशोधन अधिनियम को, जिसके अंतर्गत 20 लाख से अधिक जनसंख्या वाले सभी राज्यों के लिए तीन स्तरों – गांव, खंड, और जिला स्तर की पंचायतों के प्रत्येक पांच वर्ष में नियमित चुनाव कराने तथा अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं के आरक्षण का प्रावधान है। आज विभिन्न राज्यों में लगभग ढाई लाख निर्वाचित पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों के लगभग 32 लाख निर्वाचित प्रतिनिधि हैं जो नार्वे की कुल जनसंख्या से अधिक है। इनमें तीन स्तरों वाली ग्रामीण पंचायतों के लिए निर्वाचित प्रतिनिधियों की संख्या 21 लाख से अधिक है। सभी स्थानीय जन प्रतिनिधि संस्थाओं का एक सुखद और उज्ज्वल पहलू यह है कि इन में 12 लाख से अधिक महिलाएं निर्वाचित हुई हैं। इन में लगभग 9 लाख महिलाएं पंचायतों के लिए चुनी जाती हैं। कह सकते हैं कि पंचायतों में निर्वाचित महिला पंचों की संख्या लक्षित 33 प्रतिशत को पारकर 40 प्रतिशत से भी अधिक है। जहां पहले कभी महिला सरपंच या उपसरपंच दीपक लेकर ढूंढने पर भी नहीं मिलती थी, वहां सब अब ये ही ग्रामीण महिला नेता अपनी कर्तव्यपरायणता, निष्ठा और निष्पक्षता के कारण पंचायती राज इतिहास का स्वर्णाक्षर बनती जा रही है। पहले महिलाएं निरक्षरता के कारण घर की चौखट या दहलीज से

बाहर निकलने को पाप या अपराध मानती थी, लेकिन अब अपनी अवस्था, कथित कमजोर सेक्स और परालोचना की परवाह किए बिना साक्षरता की सीढ़ियों पर तेज कदम बढ़ाते हुए लगभग प्रत्येक परीक्षण और परीक्षा में पुरुषों से आगे निकलती जा रही हैं। कई पंचायतों को फास्ट ट्रैक अदालतों से भी अधिक तेजी से झगड़े निपटाने का गौरव प्राप्त है। अनेक ग्रामीण आज भी पंचों को परमेश्वर मान कर आपसी रंजिशों–क्लेशों को पंचायतों में निपटाना पसंद करते हैं।

वर्तमान संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार ने 22 मई, 2004 को सत्तारूढ़ होने के बाद पांच दिन में ही देश में ही पहली बार पंचायती राज मंत्रालय की स्थापना कर एक बेमिसाल ऐतिहासिक कदम उठाया। पहले किसी भी सरकार ने पंचायती राज मंत्रालय के गठन की बात तो दूर इस का स्वतंत्र या अलग विभाग तक नहीं बनाया था। यह ग्रामीण विकास मंत्रालय के एक छोटे विभाग और हिस्से के रूप में ही बना रहा। अब पूरे पंचायती राज मंत्रालय की स्थापना इस बात का ठोस और ज्वलंत प्रमाण है कि वर्तमान सरकार जमीन से जुड़े छोटे–छोटे हजारों लाखों लोकतंत्रों की स्थापना को तथा इन नन्हीं जन संसदों को 29 विषय सौंप कर तथा वित्तीय अधिकार और सीधे अनुदान देकर उन्हें कितना महत्व प्रदान करती है। पंचायतों और ग्राम सभाओं को राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून के अंतर्गत विभिन्न परियोजनाओं का चुनाव करने और फिर अपनी देखरेख में उन्हें लागू कराने की बात पहले एक कोरा सपना थी। प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के शब्दों में पंचायती राज ग्रामीण भारत में 70 करोड़ अवसरों को पैदा करने का जरिया है। गांव – गांव में पंचायत होने के कारण राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने प्रत्येक गांव को विकास की इकाई माना था। विकास–इकाई की परिकल्पना को यथार्थ की धरती पर उतारने का कामयाब प्रयास ये पंचायतें कर रही हैं। पंचायतों और ग्राम सभाओं के प्रयत्नों का परिणाम है कि बहुआयामी कार्यक्रमों के जरिए गांवों की खुशियां फिर लौटने लगी हैं। पंचायतों और ग्राम सभाओं की देखरेख में कहीं सड़कें बनाई जा रही हैं तो कहीं पानी की कमी से उबरने के लिए तालाब खुदवाए जा रहे हैं। कहीं स्वच्छ पानी की आपूर्ति होने लगी है तो कहीं सफाई स्वच्छता अभियान जोरों पर है तो कहीं गरीबी से जूझने और पेट की ज्वाला शांत करने के लिए रोजगार के नए–नए अवसर जुटाए जा रहे हैं। जो काम आज के रोजगार कार्यालय नहीं कर पा रहे हैं, उन्हें ग्राम सभाएं और पंचायतें बखूबी कर दिखा रही हैं। पंचायतों के माध्यम से और उनकी देखरेख में पहले सत्ताइस राज्यों के दो सौ जिलों में और बाद में 330 जिलों के गांव–गांव में प्रत्येक निर्धन परिवार के सशक्त व्यक्ति, हथौड़ा, फावड़ा, छैनी, गैंती और टोकरी लेकर अनगिनत विकास एवं निर्माण कार्यों को मूर्तरूप दे रहे हैं। इसी तरह सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के तहत अन्य जिलों में हजारों गरीब ग्रामीणों को रोजगार उपलब्ध हो रहा है। जब ये मजदूर और मेहनतकश नकद राशि लिए और कंधे पर अनाज उठाए घर लौटते हैं तो यह तर्क–कुतर्क जमीन में गहरा दफन हो जाता है कि आज 9.2 प्रतिशत की विकास दर में से नौ प्रतिशत हिस्सा क्लासों यानी उच्च वर्ग के लिए तथा शेष यानी दशमलव दो प्रतिशत हिस्सा मासेस यानी आम लोगों के लिए है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना सहित आठों फलैगशिप कार्यक्रम तथा सिंचाई, ग्रामीण सड़कों, ग्रामीण मकानों, पीने के पानी, ग्रामीण विद्युतीकरण तथा टेलीफोन सम्पर्क सहित भारत निर्माण के विभिन्न कार्यक्रम – आम लोगों और खासकर 70 प्रतिशत जनसंख्या वाले ग्रामीण भारत के लिए ही तो हैं। इतना ही नहीं इसमें से अधिकतर कार्यक्रम सीधे पंचायतों और ग्राम सभाओं के अधिकार और कर्तव्य क्षेत्र में आते हैं।

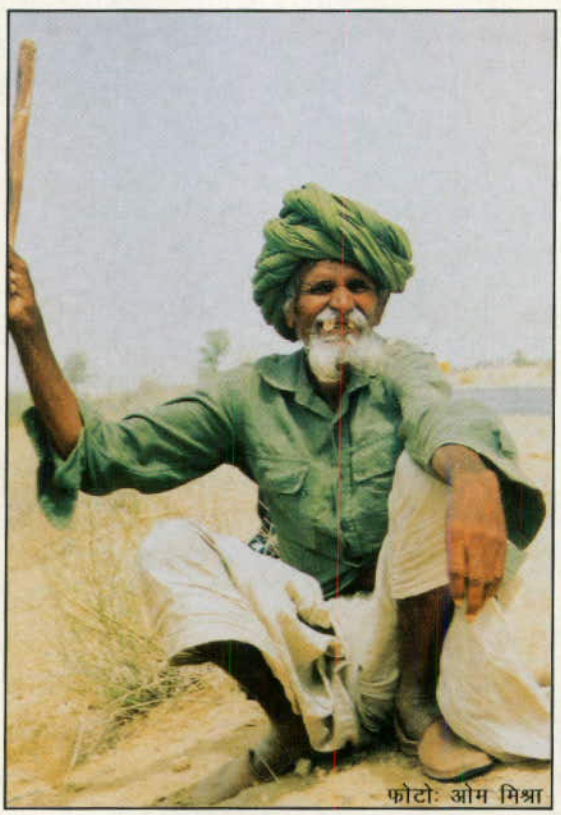
फोटोः ओम मिश्रा

पंचायती राज में सुनहरे भविष्य का सपना लिए हुए बुजुर्ग

नई जिम्मेदारियों और कामों के दायरे काफी व्यापक हो जाने के कारण पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत बनाना एक अनिवार्यता बन गया है, कारण कर्तव्यों की परिधि बढ़ाते जाने के कारण इनमें कई कमियां–कमजोरियां आ गयी है। इसलिए इन्हें दूर कर समूचे तंत्र को सुदृढ़ता प्रदान करना वक्त की जरूरत बन गया है। इसके लिए त्रिमुखी संस्थागत तंत्र स्थापित किया गया है। इस त्रिमूर्ति में राज्य निर्वाचन आयोग विभिन्न स्तरों की पंचायतों का गठन करता है। दूसरे, राज्य वित्त आयोग उपलब्ध साधनों से पंचायतों को पोषित, विकसित और सुदृढ़ करता है। तीसरे, जिला आयोजना

आयोग विभिन्न कार्यक्रमों और परियोजनाओं के आकार, तदनुसार व्यय, और संसाधनों आदि की रूपरेखा तैयार करता है।

इस सम्पूर्ण परिदृश्य के शोख गुलाबी रंग के बावजूद तस्वीर के मटमैले पक्ष से आंखें मूंद लेने से सच्चाई पर पर्दा नहीं पड़ सकता। आज निष्क्रिय पंचायतों की संख्या इतनी बढ़ गयी है कि केवल तीन से चार प्रतिशत गांवों में ही बुनियादी अथवा सबसे निचले स्तर का लोकतांत्रिक क्रियाशील और जीवंत है। पंचायती राज की त्रिस्तरीय प्रतिनिधि संस्थाओं के लिए चुनाव नियमित रूप से न होने की शिकायतें निरंतर बढ़ती जा रही है, और जहां ये शिकायतें होती है, वहां घपलों, अनियमितताओं, जोरजबरदस्ती, हिंसात्मक घटनाओं, मतपेटियां छीनने की घटनाओं आदि को लेकर सारी चुनाव प्रक्रिया की निष्पक्षता की तरफ आलोचना की उंगलियां उठने लगती हैं। निर्वाचन आयोग ने स्वाधीनता प्राप्ति के बाद 60 वर्षों में राज्य विधान सभाओं, विधान परिषदों, लोकसभा और राज्य सभा के चुनावों के हर पहलू को ध्यान में रखते हुए कुछ विस्तृत नियम, सिद्धान्त और मानदंड तैयार किए हैं। इनका उल्लंघन करना अयोग्यता को निमंत्रण देना और उम्मीदवार के लिए मुसीबत मोल लेना होता है। लेकिन पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव में धांधलियां होना और लठैतों की चांदी होना एक आम बात है। वैसे भी इसके चुनावों को लेकर न तो एक सिद्धान्त, मानदण्ड, अथवा कार्यविधियां हैं, न धांधलियां तथा भ्रष्टाचार के निवारण के लिए कोई पुख्ता अचूक उपाय हैं और न कारगर कार्यनीति। असल में पंचायती राज शतप्रतिशत राज्यों का विषय होने के कारण उनके अलग–अलग राग हैं और अलग–अलग ढपली। राज्यों में अलग–अलग परिस्थितियां, अलग–अलग सोच तथा अलग–अलग रणनीति होने और समान कार्यनीति का अभाव होने से पंचायती राज के समतल राहों पर बढ़ने में कठिनाइयां ही कठिनाइयां है।

फोटो: ओम मिश्रा

नाथों की पंचायत में बहस : कौन बने सरपंच ?

गत वर्ष जून में नई दिल्ली में पंचायती राज पर आयोजित तीन दिन की कार्यशाला में विचार व्यक्त किया गया कि राज्य चुनाव आयोग, राज्य वित्त आयोग और जिला आयोजना समिति की त्रिमूर्ति को चौमुंड राक्षस से दो–दो हाथ होना ही पड़ेगा। इस चार सिर वाले राक्षस की पहचान लोभी भ्रष्ट नौकरशाहों, कल्पना और संकल्प शक्ति रहित छुटभैया नेताओं, पुराने ढर्रे और सोच पर चलने वाले अहम पीड़ित जमीदारों और उच्च वर्ग के लोगों तथा कामगारों का खून चूसने वाले ठेकेदारों और उनके पिट्ठुओं के रूप में की गयी है। जहां तक नौकरशाहों का संबंध है, कलेक्टर तथा उनके सहकर्मी सत्ता सूत्र अपने हाथ में समेटे रखने के चक्कर में यह नहीं चाहते कि जिला प्रधान या अन्य निर्वाचित पंच उनके अधिकारों में कोई सेंध लगाएं। इसी तरह निचले स्तर पर बीडीओ और पंचायत प्रमुख के बीच अधिकारों को लेकर खींचतान और मनमुटाव होना आम बात है। लेकिन गांवों में रहने वाले किसी भी व्यक्ति की निगाह में पंचायती राज भी तभी अपना सही मुकाम बना सकेगा और सही धरती पर खड़ा हो सकेगा जब जिला और स्थानीय शासन इकाई शब्द का उल्लेख होते ही कलेक्टर या उनके कर्मियों की फौज की नहीं, बल्कि जिला परिषद अध्यक्ष और पंचायती राज के उन पंचों की तस्वीर उभर कर सामने आए जिन्हें लोगों ने चुना हो और जो जनता के प्रति जिम्मेदार हों।

अधिकतम लोकतंत्र वहां होता है, जहां सीढ़ी दर सीढ़ी – अधिकारों का हस्तांतरण होता जाता है। यही पंचायती राज तथा गांव गणतंत्रों का मूल मंत्र और मूल सोच है। लेकिन कई ग्रामीण क्षेत्रों में धारा इसके उलट बह रही है। वहां पंचायतों और पंच बीडीओ यानी खंड विकास अधिकारी के कार्यालय के एजेंट बन कर रह गये है। सोच इतनी सीमित रह गई है कि ग्रामीण, सरकारी नौकरी हासिल करने के लिए पंचायतों को महज अपनी जाति का प्रमाण–पत्र हासिल करने की संस्था मानने लगे है। पारिवारिक विवादों, निजी रंजिशें, जमीन के चकों पर मालिकाना हक, जातपात के झगड़ों तथा अन्य स्थानीय मसलों पर तरह–तरह के दबावों में आकर पंचायतों के एक तरफा या पक्षपातपूर्ण निर्णयों के कारण स्थानीय ग्रामीण विवादों को पुलिस थानों या अदालतों में निपटाना बेहतर समझने लगे हैं। अब तो ग्राम न्यायालय बनाने की बात सोची जा रही है। पंचायतों के साथ जनता का जुड़ाव निरंतर क्षीण होते जाने और उनके चुनाव

कायदे से और वक्त पर न होने या फिर पंचायतों के अत्यंत दकियानूसी होने के कारण अनेक क्षेत्रों में उन्हें खत्म करने की आवाजें उठने लगी हैं। लेकिन यह कोई समाधान नहीं है। ग्रामीणों के स्थानीय नौकरशाहों, सत्ता के दलालों और उनके पिट्ठुओं की दया पर छोड़ देने से उनके दुखदर्दों को कभी कोई नहीं सुनेगा, समाधान की बात तो बहुत दूर है। समस्या का समाधान कम पंचायती राज में नहीं, बल्कि सुचारू बेहतर और अधिक पंचायती राज में ढूढ़ना होगा। इसीलिए 29 मामले उनके अधिकार क्षेत्र में रखे गये हैं।

यह भी जरूरी है कि एनजीओ यानी गैर–सरकारी संगठन पंचायतों का स्थान लेने की बजाय सही सक्रिय एनजीओ बने और पंचायतों की मजबूत बाहें, आंख, कान बन कर उन्हें बल प्रदान करें। इसके अलावा पंचायतों और ग्राम सभाओं के कामकाज में पारदर्शिता लाने और उन पर ग्रामीणों की सतत पैनी नजर रहने से सभी स्तरों के पंच जिम्मेदारी, ईमानदारी, निष्पक्षता और बिना किसी लागलपेट के काम करेंगे। सभी को सूचना प्राप्त करने का अधिकार मिलने से पंचायतें अपनी छवि को बेदाग रखने के लिए प्रेरित होंगी। पंचायती राज संस्थाओं का आर्थिक और वित्तीय दृष्टि से भी मजबूत होना अत्यंत आवश्यक है। तभी लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का नया इतिहास रचा जा सकेगा। पंचायतों को 29 विषय हस्तांतरित तो कर दिए गए हैं, पर जेब बच्चों की भी नहीं बनाई गयी है। एक सांसद को अपने क्षेत्र के विकास के लिए दो करोड़ रुपये वार्षिक मिलते हैं, लेकिन पंचों को समुचित जेब खर्च भी नसीब नहीं होता। यह विडंबना तब और भी कटोचने लगती है जब हम पाते हैं कि प्रायः ग्रामीण विकास मंत्रालय और पंचायती राज मंत्रालय की संयुक्त बजट राशि किसी भी अन्य मंत्रालय से कम नहीं होती। इतना ही नहीं, पंचायतों को सौंपे गये 29 विषयों में से कई विषय अन्य मंत्रालयों के अधीन भी आने से इसके कार्यों और पंचों के लिए धन के अभाव की बात सोची भी नहीं जा सकती। संसद की स्थायी समिति के अनुसार पंचायती राज को सौंपे गये 29 विषयों के लिए निर्धारित बजट की 71,000 करोड़ रुपये की राशि में से 40,000 करोड़ रुपये यानी आधे से अधिक राशि केन्द्रीय मंत्रालयों को दी गयी है। इस राशि को पंचायत कार्यों में न लगा कर केन्द्रीय मंत्रालयों द्वारा हड़प लेना घोर अन्याय है। पंचायतों को तो चार प्रतिशत से भी कम राशि मिल पाती है।

लेकिन यह निश्चित है कि औद्योगिक घरानों के स्वतंत्र रूप से या विशेष आर्थिक क्षेत्रों के माध्यम से गांवों की तरफ रूख करने से ग्रामीण भारत की कृषि अर्थव्यवस्था, बुनियादी ढांचे, रोजगार सृजन, रहन–सहन और पंचायत संस्कृति तथा पंचायती राज की पूरी संरचना में जबरदस्त परिवर्तन होने जा रहे हैं। ये ऐसे परिवर्तन होंगे जिनमें शहरों ही नहीं, गांवों के चेहरे के साथ नया चेहरा जुड़ने या चेहरे पर नया चेहरा लगने जा रहा है। यह नया चेहरा पहले चेहरे से अधिक चमक दमक लिए होगा या पहले चेहरे की चमक भी छीन लेगा, अभिशाप होगा या वरदान, अभी इस संबंध में कुछ भी निश्चित रूप में नहीं कहा जा सकता। विशाल कारखानों तथा ऐसी ही अन्य वृहत योजनाओं से न केवल शहरी जगत बल्कि ग्रामीण जगत का नक्शा बदल जाएगा। पश्चिम बंगाल में नंदीग्राम की हिंसक घटनाएं इन्हीं आशंकाओं का दुष्परिणाम है। इन योजनाओं से जहां कई उधोग नगरियां अस्तित्व में आएंगी वहां इन की आंधी में हजारों खेत उजड़ जाएंगे, सैंकड़ों गांवों का वजूद खत्म हो जाएगा और इनके साथ ही जायेगा अनेक पंचायतों, चौपालों, पंचायती राज संस्थाओं और स्वशासन इकाइयों का अस्तित्व। कृषि क्रांति को भी जबरदस्त धक्का लगेगा। जमीनों के मुआवजे पर उत्पन्न विवाद एक नया सिरदर्द पैदा करेंगे। कुछ हद तक यह बात सही है कि कृषि खुदरा बिक्री केन्द्रों का संगठित जाल बिछ जाने से कृषि उत्पादन को बढ़ावा मिलेगा और हजारों लाखों लोगों को नया रोजगार मिलेगा, लेकिन तब खेती होगी उन्हीं चुनींदा चीजों की, जिन्हें ये संगठित रिटेल दुकाने चाहेंगी। नई उद्योग नगरियों के बनने तथा हजारों लोगों को रोजगार मिलने से जिन्दगी नई करवट तो लेगी लेकिन नई बसाहटों के लिए उजाड़े गये खेत खलिहानों से हुई खाद्यान्नों में गिरावट की भरपाई के लिए उत्पादकता वृद्धि के चौतरफा कदम भी उठाने होंगे, वरना चार प्रतिशत की कृषि उत्पाद दर तथा 10 प्रतिशत की सकल घरेलू उत्पाद दर का लक्ष्य दूर की कौड़ी बन कर रह जाएगा। तब कृषि परिदृश्य में बदलाव लाने और प्रभावित ग्रामीण क्षेत्रों की दशा बेहतर बनाने के लिए पंचायतों तथा पंचायती राज मंत्रालय को नई अकल्पित जिम्मेदारियां निभानी पड़ेगी और पंचायतों को सौंपे गये 29 विषयों में नए मामले जोड़ने पड़ेगे जो संभवतः कृषि प्रोद्योगिकी, कृषि विस्तार और कृषि निर्यात आदि कई विषयों से जुड़े होंगे। इससे उनका सफर नयी राहों पर चल निकलेगा और लक्ष्यों में बदलाव लाना होगा। कृषि और उद्योग का यह नया मिलन तथा परस्पर हाथ मिलाना किस करवट बैठेगा– आगत कल ही बतायेगा। जो हो यह अब तक के इतिहास का एक नया अध्याय होगा तथा नए युगांतकारी युग की नई अनपरखी, अनपहचानी राह होगी जो कई जोखिमों के साथ कई आशाओं को भी अपने दामन में समोए होगी।

(लेखक आजकल के भूतपूर्व संपादक हैं)
ई–मेलः sunil arora@sify.co.in
268, सत्य निकेतन, मोतीबाग, नई दिल्ली–21

पंचायती राज का भविष्य

सुरेन्द्र कटारिया

इसमें कहीं कोई सन्देह नहीं है कि भारत में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से लोकतांत्रिक मूल्यों, विकास के अधिकार की अवधारणा, जन जागरूकता, पिछड़े वर्गों का उत्थान, महिला सशक्तिकरण, जनसंख्या नियंत्रण, ग्राम विकास योजना क्रियान्वयन तथा प्रशासन में जनसहभागिता जैसे कारकों को बल मिला है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि 73वें संविधान संशोधन के पश्चात पंचायती राज संस्थाएं संगठनात्मक एवं संरचनात्मक रूप से स्थापित हो चुकी हैं। अब उन्हें केवल सशक्त किया जाना है। ये संस्थाएं जिन कमियों से जूझ रही हैं उनमें राजनीतिक विद्वेष, जातिवाद का प्रसार, वित्तीय संसाधनों की कमी, ग्राम सभा की खानापूर्ति तथा समानांतर न्याय प्रणाली इत्यादि प्रमुख है। अब समय आ गया है कि पंचायती राज संस्थाओं को वास्तविक अर्थों में सशक्त एवं प्रभावी बनाया जाए। इस क्रम में निम्नांकित बिन्दु विचारणीय हैं–

ग्राम पंचायत की विकास योजनाएं समझाते हुए अधिकारी

- भारत में जिस तेजी से सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिवर्तन हो रहे हैं उनके परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों का भूगोल भी बदल रहा है। बड़े–बड़े राजमार्गों एवं उच्च मार्गों के निर्माण, कल–कारखानों की स्थापना तथा निजी शैक्षिक संस्थाओं का गांवों में प्रवेश होने के साथ–साथ गांवों में आधारभूत संरचना के विकास को गति मिलने से गांवों का परिदृश्य बदल रहा है। महानगरों एवं शहरों के समीप 'सैटेलाइट टाउन' विकसित हो रहें हैं तथा 5–10 हजार की जनसंख्या वाले गांव कस्बों का रूप लेते जा रहे हैं। केरल में प्रवर्तित ग्रामीरीय (ग्रामीण + नगरीय का संयुक्त रूप) अर्थात् रूरबन (रूरल + अरबन का संयुक्त रूप) सभ्यता एवं संस्कृति तेजी से सम्पूर्ण भारत में फैल रही है। दूसरे शब्दों में कहें तो आज के गांव वैसे नहीं है जैसे वे 20 वर्ष पूर्व हुआ करते थे।
- भविष्य की पंचायती राज संस्थाओं की कल्पना करते समय हमें इस बिन्दु को ध्यान में रखना होगा कि ये संस्थाएं अब ग्रामीरीय संस्कृति के अनुरूप हों। निस्सन्देह यह संस्कृति कृषि प्रधान होते हुए भी टी.वी., ट्रेक्टर, कार, कम्प्यूटर, ए.सी., फ्रिज तथा अन्य शहरी सुविधाओं से परिपूर्ण होगी।
- 21वीं सदी का लोक प्रशासन एवं शासन व्यवस्था उन परिवर्तनों के दौर से गुजर रही हैं जो मूलतः आर्थिक उदारीकरण एवं सूचना प्रौद्योगिकी क्रांति के कारण सम्पूर्ण व्यवस्था पर हावी हुए हैं। इनमें विकेन्द्रीकरण, सुशासन, निजीकरण, अनुक्रियाशील प्रशासन (रिस्पोन्सिव एडमिनिस्ट्रेशन), ई. शासन, प्रशासनिक नैतिकता, पारदर्शिता, जवाबदेयता तथा जनसहभागिता इत्यादि प्रमुख प्रवृतियां हैं। फ्रीमैन कहते हैं– "वह सरकार सबसे अच्छी है जो सबसे कम शासन करती है।" यहां प्रश्न शासन करने का नहीं बल्कि लोगों की निर्णय में सहभागिता से है। अतः नेतृत्व की लोकतांत्रिक शैली का प्रसार करना होगा।
- इसमें कोई संदेह नहीं होना चाहिए कि मोबाइल संस्कृति ने मानव–जीवन को अत्यधिक गतिशील एवं त्वरित बना दिया है। अतः आज 'तुरन्त संस्कृति' का जन्म हो चुका है जिसमें धैर्य का कोई स्थान नहीं है। परम्परागत नौकरशाही अब अधिक दिन नहीं टिकेगी। विगत 2 वर्षों में राजस्थान के सरकारी चिकित्सालयों में 36 ऐसी घटनाएं घटित हुई हैं जब किसी रोगी के परिजनों ने रोगी के उपचार में देरी या त्रुटि के कारण चिकित्सकों के साथ मारपीट की है। यह भारतीय समाज की मानसिकता में आया एक बड़ा परिवर्तन है जो जनता के दबे हुए आक्रोश को इंगित कर रहा है। भविष्य की पंचायती राज संस्थाओं को यह आत्मसात् कर लेना चाहिए कि पुराना घिसा–पिटा ढर्रा अधिक चलने वाला नहीं है।

मैं अपने इस लेख को इस मान्यता के साथ प्रस्तुत कर रहा हूं कि या तो हमें पंचायती राज संस्थाओं को पूर्णतः समाप्त कर देना चाहिए या फिर इन्हें पूर्ण सरकार के रूप में विकसित करना चाहिये। प्रस्तावित सुधार इस प्रकार होना चाहिए।

• पंचायती राज संस्थाओं को संघीय सरकार एवं राज्य सरकार की भांति स्थानीय सरकार के रूप में पूर्ण मान्यता मिले अर्थात् इनमें विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका तीनों अंग कार्य करें।

• पंचायती राज के तीन स्तर रखना किसी भी सूरत में व्यावहारिक नहीं है। ग्राम पंचायत स्तर पर वर्तमान 3–5 पंचायतों को संयुक्त करके मण्डल पंचायत बना दी जाये तथा मध्यवर्ती पंचायत (पंचायत समिति) समाप्त कर दी जाये। वर्तमान मध्यवर्ती पंचायतों का कार्मिक तन्त्र मण्डल पंचायत को दे दिया जाये। उदाहरणार्थ, राजस्थान में एक पंचायत समिति के अधीन वर्तमान में 30–35 ग्राम पंचायतें हैं। नवीन व्यवस्था में इतने क्षेत्र में 7–10 मण्डल पंचायतें होंगी। उदाहरणार्थ, जयपुर जिले में वर्तमान में 13 पंचायत समितियां तथा 488 ग्राम पंचायतें हैं। प्रस्तावित मॉडल में सभी पंचायत समितियां समाप्त हो जायेंगी तथा 488 ग्राम पंचायतों के स्थान पर लगभग 130 मण्डल पंचायतें स्थापित हो जायेंगी। अर्थात् वर्तमान ग्राम पंचायतें समाप्त हो जायें तथा इनके स्थान पर बड़ी मण्डल पंचायत बन जाये।

• मण्डल पंचायतों के मुखिया मिलकर जिला प्रमुख का चयन करेंगे तथा सभी मण्डल पंचायतों के अध्यक्ष जिला पंचायत की आम सभा के सदस्य होंगे। जिला पंचायत केवल जिला आयोजना के कार्य देखेगी तथा मण्डल पंचायतों से सम्बन्धित अपील एवं समन्वय कार्य करेगी। इसमें जिले के सांसद एवं विधायक भी सदस्य होंगे। जिला पंचायत के प्रमुख को राज्य मंत्री का दर्जा दिया जाये।

• राज्य स्तर पर मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में राज्य पंचायत परिषद् होगी जिसमें सभी जिला पंचायतों के प्रमुख तथा विधानसभा में विपक्ष का नेता सदस्य होंगे। यह परिषद् केवल नीतिगत् निर्णय लेगी।

• राज्य स्तर पर एक पंचायत लोकपाल होगा जो कि पंचायती राज संस्थाओं के विरूद्ध भ्रष्टाचार सम्बन्धी शिकायतों की जांच करेगा। इस लोकपाल को अर्द्ध न्यायिक संस्था का रूप देते हुए सशक्त संस्था बनाया जाये।

आम आदमी की समस्याओं का समाधान खोजती ग्राम पंचायत

• संविधान की सातवीं अनुसूची में वर्णित संघीय, राज्य, समवर्ती सूचियों के साथ एक जिला या पंचायत सूची भी वर्णित की जाये जिसमें इन संस्थाओं को कर लगाने सम्बन्धी विषय स्पष्टतः वर्णित कर दिये जायें। इन करों को अनिवार्य कर घोषित किया जा सकता है। इसमें निम्नांकित करों (टैक्सेज) की सूची हो सकती है– भूमि एवं भवन कर, दुकान, सेवा एवं व्यवसाय कर, वाहन कर, यात्री कर, जल कर, विज्ञापन कर, मनोरंजन कर, भूमि बेचान एवं रूपान्तरण कर, चुंगी, पशु विक्रय कर, शिक्षा उप कर, मेला कर, कृषि समृद्धता कर, फेरी कर, सेवाएं प्रदान करने पर शुल्क, लाइसेंस (विविध), प्रमाण पत्र शुल्क तथा राज्य या क्षेत्र का विशिष्ट कर।

यहां पर उल्लेखनीय है कि बी. आर. मेहता ने सुझाया था कि जो व्यक्ति पंचायत को कर अदा नहीं करे उसे अगले चुनावों में मतदान से वंचित किया जाए। इस सुझाव पर भी विचार किया जाना अपेक्षित हैं।

• मण्डल पंचायतों के सदस्यों को नियमित सम्मानित वेतन (5 हजार रुपये प्रतिमाह) एवं भत्ते मिलें तथा इन्हें सांसद एवं विधायक स्थानीय निधि के अनुरूप विकास करने हेतु मण्डल पंचायत से प्रतिवर्ष 2–3 लाख रुपए स्वीकृत किए जाएं। यह राशि इन्हें मण्डल पंचायत में एकत्र करों एवं शुल्कों से ही देय होगी। अतः यह अनिवार्य हो कि ये सदस्य जनमत को प्रभावित कर यह कोष समृद्ध रखें।

• ग्रामसभा की अवधारणा समाप्त कर दी जाय। यह मात्र खानापूर्ति करने की एक निष्क्रिय संस्था है। यदि ग्रामसभा का प्रावधान रखा जाता है तो गणपूर्ति की बाध्यता न रखी जाए। केरल के इस प्रावधान को भी अपना सकते हैं कि एक बार गणपूर्ति के अभाव में स्थगित हुई ग्रामसभा में अगली बार 50 व्यक्तियों की उपस्थिति पर्याप्त मानी जाती है।

• पंचायती राज संस्थाओं के विवादों की सुनवाई हेतु पृथक् से पंचायत न्यायाधिकरण (ट्रिब्यूनल) होना चाहिए।

मण्डल पंचायत की संरचना

मण्डल पंचायत, पंचायती राज की मूलभूत एवं महत्त्वपूर्ण इकाई होगी जिसमें सरकार के तीनों अंग कार्य करेंगे–

विधायिका

मण्डल पंचायत में लगभग 50–60 सदस्य होंगे जो कि दलीय आधार पर (लगभग 500 की

जनसंख्या पर एक सदस्य) चुनाव लड़ेंगे। इसमें सभी सदस्य मिलकर (बहुमत दल वाले) अपना अध्यक्ष चुनेंगे तथा इस विधायिका में प्रतिपक्ष का नेता भी होगा। इस पंचायत का अध्यक्ष अपना 8–10 सदस्यीय मंत्रिमण्डल भी गठित करेगा। यह पंचायत मासिक बैठक करेगी तथा इसके विशेष सत्र भी होंगे। यह पंचायत अपने क्षेत्र में समस्त कानून बना सकेगी तथा प्रतिवर्ष फरवरी में केन्द्रीय आम बजट, मार्च–अप्रैल में राज्य बजट के पश्चात् मई–जून में अपने मण्डल का बजट प्रस्तुत कर विधिवत पारित कराएंगी।

मण्डल पंचायत का क्षेत्र (भौगोलिक) निर्धारित करते समय हमें राजस्व, निर्वाचन, कृषि, पुलिस, वन, पंचायती राज तथा विद्युत क्षेत्र के क्रम में विभाजित प्रशासनिक संरचना को ध्यान में रखना होगा। भारत में राजस्व की तहसीलें, पंचायतों के खण्ड तथा निर्वाचन के क्षेत्र बिखरे हुए एवं दुविधापूर्ण हैं। इस स्थिति से हमें अभी से दूरगामी सोच रखनी होगी। उदाहरण के लिए जयपुर की वर्तमान पंचायत समिति, चाकसू के क्षेत्र में तीन विधानसभा क्षेत्र (बस्सी, फागी, सांगानेर) हैं। अजमेर जिले के पंचायत समिति अराई की स्थिति तो अत्यन्त उलझी हुई है। इसके क्षेत्र में दो संसदीय क्षेत्र (टोंक, अजमेर), 3 विधानसभा क्षेत्र (भिनाय, केकड़ी किशनगढ़), 2 उपखण्ड (केकड़ी, किशनगढ़), तथा 2 तहसीलें (किशनगढ़ सरवाड़ा) पड़ती हैं। ऐसी उलझनपूर्ण स्थिति मण्डल पंचायतों के क्रम में समाप्त की जानी अपेक्षित है।

कार्यपालिका

मण्डल पंचायत का अध्यक्ष कार्यपालिका का अध्यक्ष होगा तथा उसका मंत्रिमण्डल समस्त प्रशासनिक कार्यों का नियंत्रण, निर्देशन करेगा। प्रत्येक मण्डल में एक ग्राम सचिवालय होगा जिसका मुख्य प्रशासनिक अधिकारी राजपत्रित पद वाला ऐसा उच्च पदेन अधिकारी होगा जो कि उस क्षेत्र के समस्त लोक सेवकों में सर्वोच्च होगा। ग्राम सचिवालय में निम्नांकित विभाग हो सकते हैं–

- कार्मिक एवं वित्त विभाग
- राजस्व, गृह तथा न्याय विभाग
- शिक्षा विभाग
- स्वास्थ्य, सामुदायिक स्वच्छता एवं जलदाय विभाग
- ऊर्जा निर्माण एवं इंजीनियरिंग विभाग
- सहकारिता एवं उद्योग विभाग
- परिवहन एवं संचार विभाग
- वन, कृषि एवं सिंचाई विभाग
- मानव संसाधन विकास विभाग (समाज कल्याण, महिला एवं बाल विकास इत्यादि)।

ग्रामीण क्षेत्रों में पदस्थापित इन विभागों के कार्मिक, उनके कार्य तथा कोष मण्डल पंचायतों को हस्तान्तरित हो जाएं तथा ये सभी कार्मिक उस मण्डल पंचायत सरकार के स्थायी कार्मिक माने जाएं। प्रत्येक राज्य में राज्य ग्रामीण विकास सेवा का गठन कर

पंचायती राज संस्थाओं का प्रस्तावित मॉडल

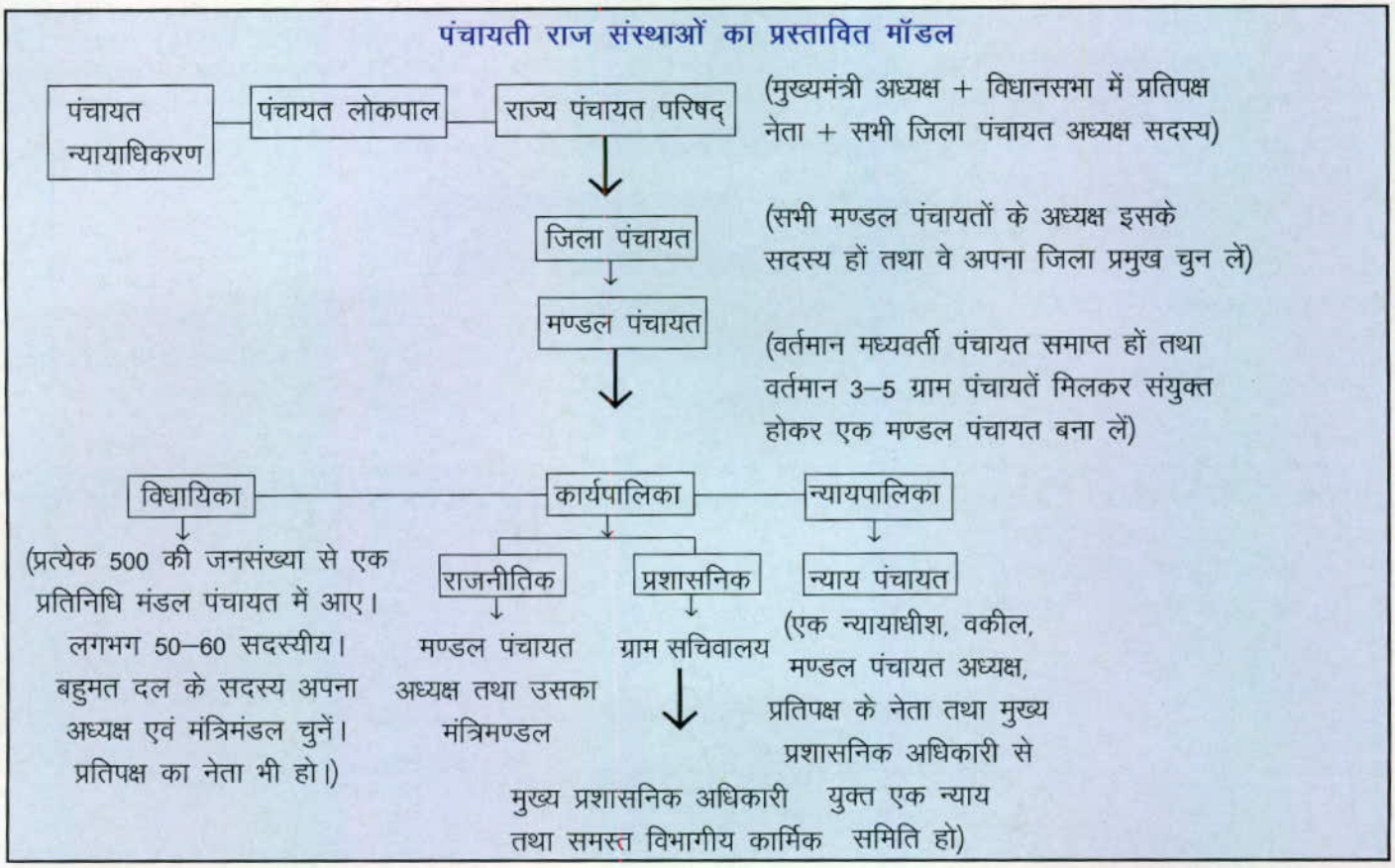

दिया जाये तथा इन कार्मिकों का स्थानान्तरण न हो। केवल जिला पंचायत कुछ प्रकरणों में अन्तरमण्डल पंचायत स्थानान्तरण कर सकती है, यदि दोनों तरफ की मण्डल पंचायतें सहमति दे दें।

न्यायपालिका

प्रत्येक मण्डल पंचायत में एक स्थायी न्याय पंचायत हो जिसमें न्यायाधीश एवं वकील नियुक्त हों। यह निर्धारित कर दिया जाये कि ग्रामीण क्षेत्रों के भूमि, राजस्व, कृषि तथा अन्य छोटे दीवानी एवं फौजदारी मुकदमे प्रथमतः न्याय पंचायत में ही दायर होंगे। न्याय पंचायत में एक न्यायाधीश, वकील, मण्डल पंचायत अध्यक्ष, प्रतिपक्ष नेता तथा पंचायत का मुख्य प्रशासनिक अधिकारियों से युक्त एक न्याय समिति होगी। न्याय पंचायत के निर्णय के विरूद्ध सम्बन्ध प्रकरण के अनुसार तहसील राजस्व न्यायालय या अन्य दीवानी एवं फौजदारी न्यायालयों में अपील हो सकेगी।

जहां तक वित्तीय प्रशासन का प्रश्न है, उसे सबसे अधिक सुदृढ़ बनाना प्राथमिक आवश्यकता है। मण्डल पंचायत के पास आय के निम्नांकित स्रोत होंगे –

पंचायत या जिला सूची में वर्णित कर, केन्द्रीय वित्त आयोग से प्राप्त अनुदान, राज्य वित्त आयोग से प्राप्त अनुदान, राज्य सरकार द्वारा प्रति व्यक्ति अनुदान, हस्तान्तरित विभागों से प्राप्त वार्षिक बजट राशि, पंचायत स्तर पर लगने वाले शुल्क, जन्म प्रमाण पत्र, मृत्यु प्रमाण पत्र, विवाह पंजीकरण, भूमि नामान्तरण, बिजली, पानी मासिक शुल्क, पशु खाल (चमड़ा एवं हड्डी ठेका), पंचायत भूमि पर अन्य उत्पाद, दुकान पंजीकरण, भूमि–भवन पट्टे, जाति/निवास/अन्य प्रमाण पत्र, राशन कार्ड, भवन निर्माण स्वीकृति, नक्शा, नक्शा संशोधन, नीलामी, अतिक्रमण इत्यादि पर दण्ड। एक सुझाव यह है कि गांवों से शहर जा बसे लोक सेवकों, निजी उद्यमियों एवं धनी व्यक्तियों से पंचायत कोष में दान लिया जाये (जिस गांव से वे गए हैं, उसी के कोष में) तथा ऐसा दान आयकर से छूट प्राप्त हो जैसा कि संविधान समीक्षा आयोग ने सुझाया है। इन संस्थाओं को उधार लेने की भी छूट प्राप्त हो।

मण्डल पंचायतों को नियोजन प्रक्रिया की विकेन्द्रीकृत इकाई बनाना चाहिए। इस क्रम में पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी का कथन महत्वपूर्ण है "हमें ऊपर के स्तर से योजनाएं बनाने की प्रक्रिया बन्द करनी होगी। हमें वास्तविकताओं से बहुत दूर शीर्षस्थ स्तर पर सोची और निश्चित की जाने वाली प्राथमिकताओं पर रोक लगानी होगी। लोकतांत्रिक व्यवस्था आर्थिक प्रगति के पितृसत्तावादी प्रारूपों को लेकर नहीं चल सकती है। मुखर लोकतंत्र भागीदारी की मांग करता है।"

वस्तुतः इस लेख में वर्णित मॉडल एक प्रस्ताव भर है जिसे संविधान संशोधन के द्वारा केन्द्र सरकार लागू कर सकती है। इतना अवश्य है कि सत्ता का प्रत्यायोजन या विकेन्द्रीकरण आसान कार्य नहीं है। कटु सत्य यह है कि राज्य सरकारें पंचायतों को सशक्त करना ही नहीं चाहती हैं किन्तु वास्तविकता यह भी है कि समय तथा परिस्थितियां अपने आप अधिकार छीन लेती हैं। जनमत के दबाव में आज नहीं तो कल पंचायती राज मजबूत अवश्य होगा।

(लेखक लोक प्रशासन के व्याख्याता तथा राजस्थान विश्वविद्यालय में यू.जी.सी. के पोस्ट डॉक्टोरल रिसर्च फैलों हैं।)
ई–मेलः s.k.kataria_64@rediffmail.com
81/91, नीलागिरी मार्ग, मानसरोवर, जयपुर–20

सदस्यता कूपन

मैं/हम कुरुक्षेत्र का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का
(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर *निदेशक, प्रकाशन विभाग* को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....

पता .....

..... पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली–110 066

ग्रामीण विकास में पंचायती राज की भूमिका

मनीष कुमार

"सच्चे लोकतन्त्र को केन्द्र में बैठे व्यक्ति नहीं चला सकते, इसे प्रत्येक गांव के निचले स्तर के लोगों द्वारा ही चलाया जा सकता है" –महात्मा गांधी

भारत को गांवों का देश कहा जाता है। आखिर क्यों न कहा जाय, इस देश की अधिकांश आबादी जो गांवों में रहती है। दूरदृष्टि से अगर देखा जाय तो हम यह कह सकते हैं कि गांवों के विकास और प्रगति पर सम्पूर्ण देश का विकास निर्भर है। इसलिए हमें सबसे पहले विकास की शुरूआत गांवों से करनी चाहिए। यदि गांवों का विकास नहीं हुआ तो देश का विकास क्षणिक साबित होगा। इसी सम्बन्ध में गांधी जी ने भी लिखा "यदि गांव नष्ट होते हैं तो देश भी नष्ट हो जायेगा।"

इन सब बातों को देखते हुए भारत सरकार ने स्वतन्त्रता के पश्चात से ही ग्रामीण प्रशासन और व्यवस्था को मजबूत करने का प्रयास किया। फलस्वरूप पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना के लिए गंभीर प्रयास किया गया। वास्तविक रूप से अगर देखा जाय तो यह प्रयास भारत के ग्रामीण पुनर्निर्माण और विकास के क्षेत्र में जनता की सीधी भागीदारी बनाने के सम्बन्ध में एक नयी सोच थी, अगर निचले स्तर के विकास में जन सहभागिता बढ़ानी है तो एक लोकतन्त्रीय शासन प्रणाली में सत्ता का विकेन्द्रीकरण आवश्यक है। पंचायती राज व्यवस्था इसी विकेन्द्रीकरण का परिणाम थी।

1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के साथ पंचायती राज का एक नया अध्याय जुड़ा जो दूसरी पंचवर्षीय योजना में झलक रहा था। हम यह नहीं कह रहे हैं कि पंचायती राज व्यवस्था स्वतंत्रता के बाद ही शुरू हुई। यह स्वतंत्रता के पहले भी थी लेकिन इसका स्वरूप दूसरा था। प्राचीन काल में आपसी झगड़ों का फैसला पंचायतें करती थी, हां यह बात जरूर है कि अंग्रेजों के शासन काल में ग्रामीण क्षेत्र के उत्थान पर बल नहीं दिया गया। अंग्रेजों की उपेक्षा का शिकार होने के कारण पंचायत व्यवस्था धीरे–धीरे समाप्त होती गयी और पंचायतों का समस्त कार्य प्रान्तीय सरकारें करने लगी।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी से प्रेरित होकर अनेक राज्यों में 1940 में पंचायतों के सम्बन्ध में कानून बनाये और 1946 में पंचायतें और जिला परिषदों का गठन किया। गांधी जी ने गांवों की पंचायतों को सामाजिक ढांचे का आधार बनाने का सुझाव दिया। गांधी जी का सपना था, कि प्रत्येक गांव की पंचायत को गणतंत्र के रूप में सभी आवश्यक अधिकारों से सम्पन्न स्वायत्तशासी और आत्मनिर्भर बनाया जाय। आज भी गांधी जी के इसी सपने को सच करने का प्रयास जारी है।

स्वतंत्रता के बाद यह अनुभव किया गया कि बिना ग्रामीण क्षेत्र के पुनर्गठन के देश का विकास सम्भव नहीं है। इसी सम्बन्ध में जवाहरलाल नेहरू ने कहा "यदि हमारी स्वाधीनता को जनता की आवाज की प्रतिध्वनि बनना है तो पंचायतों को जितनी अधिक शक्ति मिले जनता के लिए उतना ही लाभदायक है।"

पंचायती राज व्यवस्था इतनी महत्वपूर्ण होती चली गयी कि इसके महत्व को संविधान भी नजरअंदाज नहीं कर पाया और 1950 में हमारा संविधान लागू हुआ तो इसके अनुच्छेद –40 में यह कहा गया "राज्य सरकारें ग्राम पंचायतों को संगठित करने के लिए प्रयास करेगी तथा उन्हें ऐसी शक्तियों एवं अधिकारों से सम्पन्न करने के लिए प्रयास करेगी जिससे वे स्वशासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने में सक्षम हो सके।" संविधान में पंचायती राज संस्थाएं राज्य का विषय है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के सामुदायिक विकास कार्यक्रम के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में तेजी से विकास प्रक्रिया में सुधार लाने का प्रयत्न किया गया लेकिन इसमें पर्याप्त सफलता नहीं मिल सकी। इन ही कमियों को खोजने और सुझाव देने के लिए 1957 में बलवंत राय मेहता समिति का गठन किया गया। समिति ने रिपोर्ट में जो मुख्य कमी का खुलासा किया वह था 'जन–सहभागिता का अभाव'। रिपोर्ट में कहा गया कि स्थानीय नेताओं को अधिक अधिकार दिए जाने चाहिए। समिति ने कहा कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और 'सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को सुचारू रूप से चलाने के लिए त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को तुरन्त ही लागू किया जाना चाहिए। इसमें ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, खण्ड स्तर पर पंचायत समिति और जिला स्तर पर जिला परिषद। समिति ने यह भी कहा कि इनमें परस्पर सहयोग और समन्वय का भाव होना चाहिए।

बलवंत राय मेहता समिति की अनुशंसाओं को स्वीकार करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने 02 अक्टूबर 1959 को नागौर (राजस्थान) में पंचायती राज संस्थाओं के नये युग का सूत्रपात किया। नेहरू जी ने इस व्यवस्था को नये भारत के निर्माण में क्रांतिकारी और ऐतिहासिक महत्व का युगांतकारी कदम बताया। इसके बाद पंचायती राज व्यवस्था अनेक राज्यों में लागू हो गयी।

राज्यों में इसे पर्याप्त सफलता नहीं मिल पाई क्योंकि हर राज्य ने अपने–अपने अनुरूप पंचायती व्यवस्था को लागू किया इसलिए इस व्यवस्था में एकरूपता का अभाव पाया गया।

1959 में पंचायती राज व्यवस्था लागू तो जरूर हो गई लेकिन इसमें अनेक कमियां नजर आ रही थी जिसके कारण इसकी सफलता पर प्रश्न चिन्ह लग गया था। अच्छी बात यह थी कि कम से कम सरकारें इस बात को स्वीकार करती रही कि पंचायती राज व्यवस्था में कहीं न कहीं दोष विद्यमान है। पंचायती राज व्यवस्था की कमियों को दूर करने के लिए और इसे प्रभावशाली बनाने के लिए सरकार ने अनेक उपाय किये लेकिन पर्याप्त सफलता नहीं मिली। तत्पश्चात् 1977 में जनता पार्टी की सरकार अस्तित्व में आई और अशोक मेहता की अध्यक्षता में गठित समिति ने पंचायती राज व्यवस्था को नया रूप प्रदान करने का प्रयास किया लेकिन दुर्भाग्यवश समिति की सिफारिश को अमल में नहीं लाया जा सका। इसका मुख्य कारण समिति द्वारा द्विस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था का सुझाव था। समिति ने अपने सुझाव में ग्राम सभा के स्थान को भी नजरअंदाज किया। इस प्रकार अनेक कमियों का शिकार होते हुए यह सुझाव भी कार्यान्वित नहीं किया गया। पहल धीरे–धीरे आगे बढ़ती रही। 1987 में पंचायती राज व्यवस्था की समीक्षा और उपायों को सुझाने के लिए लक्ष्मीमल सिंघवी की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया। समिति ने ग्राम पंचायतों को आत्मनिर्भर बनाने की बात कही। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने लोकसभा में एक पंचायत बिल 1989 में पेश किया जिसके परिणाम स्वरूप 64वां संविधान संशोधन हुआ और पंचायती राज संस्थाओं को अधिक शक्तिशाली और स्वायत्त बनाने की बात इसमें कही गई। कहा जाता है कि यह बिल लोकसभा में तो पारित हो गया लेकिन राज्य सभा में इसे बहुमत नहीं प्राप्त हो सका। इतना सब कुछ होने के बावजूद सरकारें निरन्तर प्रयत्नशील थी। बात अब कांग्रेस के स्वाभिमान की थी 1991 में जब कांग्रेस सत्ता में आई और नरसिम्हा राव मंत्रिमंडल बना तो राजीव गांधी नीति के मार्ग को अपनाकर पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक दर्जा देने का प्रयास किया गया। इसी दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास करते हुए नाथुराम मिर्धा की अध्यक्षता में 1991 में एक समिति बनाई गई। समिति ने अपना प्रतिवेदन जुलाई 1992 में संसद को भेजा। समिति का अपना प्रतिवेदन लोकसभा में 73वें संविधान' संशोधन के रूप में 22 दिसम्बर 1992 को तथा राज्य सभा में 23 दिसम्बर 1992 को एकमत से पारित हो गया। विधेयक को 17 राज्यों के समर्थन के बाद राष्ट्रपति के पास भेजा गया। राष्ट्रपति महोदय की मंजूरी के बाद 73वां संविधान संशोधन विधेयक 1992 देश में लागू हो गया। विधेयक को 243 (1) की कोई बात अनु–244(1) में निर्दिष्ट अनुसूचित क्षेत्रों और 244 (2) में निर्दिष्ट जनजाति क्षेत्रों पर लागू होने से मुक्त रखा गया। इसके अन्तर्गत नागालैण्ड, मिजोरम, मेघालय तथा मणिपुर की जिला परिषदें हैं। पंचायतों के लिए संविधान में अनेक उपबंध किये गये हैं, जिसके विधेयक 243 'छ' के अन्तर्गत पंचायतों की शक्तियां, अधिकार और उत्तरदायित्व का प्रावधान किया गया है। अनु. 243 'ज' के अन्तर्गत पंचायतों को अपने क्षेत्र में कर लगाने का भी अधिकार दिया गया है।

आइए एक नजर डालते है कि संविधान संशोधन के बाद हमारी पंचायती राज व्यवस्था की त्रिस्तरीय प्रणाली की संरचना कैसी है–इसे तीन स्तरों पर क्रियान्वयन के संदर्भ में अपनाया गया है। ग्राम स्तर, ब्लाक स्तर और जिला स्तर ग्राम की कार्यकारी ईकाई पंचायत होती है। इसके सदस्य ग्राम सभा द्वारा चुने जाते हैं। पंचायत का एक निर्वाचित सरपंच होता है। पंचायतों की आय के स्रोत, दायित्व एवं कार्य राज्य सरकार द्वारा निर्धारित किये जाते हैं। इसका दायित्व ग्राम की समस्या से सम्बन्धित होता है। ब्लाक स्तर पर पंचायती राज व्यवस्था का मध्यवर्ती स्तर है। इसका एक निर्वाचित अध्यक्ष होता है तथा खंड विकास अधिकारी इसका मुख्य निष्पादक होता है। भारत के अधिकांश राज्यों में पंचायती राज व्यवस्था की धुरी पंचायत समिति है। जिला स्तर पर एक जिला परिषद होती है। इसमें जिला पंचायत समितियों के प्रधान जिले के निर्वाचित विधान सभा व परिषद सदस्य, जिले के निर्वाचित लोकसभा व राज्य सभा के सदस्य तथा जिला विकास अधिकारी पदेन सदस्य होते हैं। कुछ राज्यों में पंचायत समिति अपने प्रधान के अतिरिक्त एक–एक प्रतिनिधि निर्वाचित करती है जिसका कार्य निम्न स्तरीय पंचायतों पर नियंत्रण रखना होता है। पंचायतों के सम्बन्ध में 243 घ में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण का प्रावधान है, जो उनकी संख्या के अनुपात में है। पंचायतों में कुल स्थानों का 1/3 भाग महिलाओं के लिए भी आरक्षित किया गया है। पंचायतों की कार्य अवधि प्रथम अधिवेशन से पांच वर्ष की अवधि तक होगी लेकिन आगामी चुनाव प्रक्रिया इस पांच वर्ष के भीतर हो जानी चाहिए। यदि पंचायत पहले विघटित–भंग कर दी गई है तो चुनाव 6 माह के भीतर हो जाना चाहिए ।

पंचायतों में चुनाव लड़ने के लिए वे व्यक्ति जो राज्य विधान मण्डल में निर्वाचित होने की योग्यता रखते हैं सभी पंचायत की सदस्यता के लिए योग्य होंगे। केवल एक अन्तर जहां पंचायतों के लिए आयु सीमा 21 वर्ष है वहीं राज्य विधान मंडल के लिए यह 25 वर्ष है। ग्राम सभा की वर्ष में दो बार बैठक होनी चाहिए यद्यपि आवश्यकता पड़ने पर यह अधिक भी हो सकती है। यह बैठक गांव के सरपंच द्वारा बुलाई जाती है और वही इनकी अध्यक्षता भी करता है। ग्राम पंचायतों का गठन वहां किया जाता है जहां की आबादी 1000 से अधिक है। बैठक में कोरम (गणपूर्ति) के लिए कुल सदस्यों का 1/10 संख्या होना अनिवार्य है। सामान्यतः ग्राम सभा की बैठक मई और नवम्बर में होती है। मई की बैठक में

पिछले वर्ष के लेखों का वार्षिक विवरण तथा वित्तीय वर्ष के प्रस्तावित कार्य होंगे। जबकि नवम्बर की बैठक में वित्तीय वर्ष का बजट पेश किया जाएगा। ग्राम सभा को पंचायती राज व्यवस्था में विशेष स्थान प्राप्त है और इसका उत्तरदायित्व और विस्तृत हुआ है। अतः यह कहा जा सकता है कि ग्राम सभा के कार्यों और अधिकारों की परिभाषा नपे–तुले शब्दों में करना कठिन है। संविधान की 21वीं अनुसूची में ग्राम पंचायत के 29 कार्य निम्न हैं :–

- खेती, बागवानी, बंजर भूमि और चारागाह का विकास।
- भूमि विकास, भूमि सुधार, भूमि संरक्षण में सरकार की सहायता।
- लघु सिंचाई योजना में सरकार की सहायता।
- पालतू जानवर की तरक्की करना।
- मछली पालन को बढ़ावा देना।
- सार्वजनिक भूमि पर पेड़ लगवाना।
- वनोत्पाद को बढ़ावा देना।
- छोटे उद्योग धन्धे और स्थानीय व्यापार में सहयोग देना।
- खेती और व्यापार से जुड़े उद्योगों को बढ़ावा देना।
- आवास योजनाओं में सहयोग करना।
- सार्वजनिक कुओं, तालाब और पोखरों की देखभाल करना।
- ईंधन और चारा भूमि से सम्बन्धित विकास।
- गांवों की सड़कों, पुलिया और घाटों का निर्माण।
- गांवों के सार्वजनिक मार्गों व अन्य जगह पर प्रकाश की व्यवस्था।
- गैर पारम्परिक ऊर्जा स्रोतों के कार्यक्रमों को बढ़ावा देना।
- गरीबी निवारण कार्यक्रम क्रियान्वयन करना।
- शिक्षा के सम्बन्ध में जागरूकता पैदा करना।
- ग्रामीण कला और शिल्पकारों को बढ़ावा देना।
- पुस्तकालय एवं वाचनालय की देखभाल।
- गांवों में सामाजिक व सांस्कृतिक कार्यक्रम की देखभाल।
- गांव में लगने वाले मेलों, बाजारों पर नियंत्रण।
- पशु व मनुष्य टीकाकरण कार्यक्रम को प्रोत्साहन।
- परिवार कल्याण कार्यक्रम को प्रोत्साहन।
- ग्रामीण बच्चों व महिलाओं के स्वास्थ्य व पोषण में योगदान।
- पंचायत के आर्थिक विकास के लिए योजना बनाना।
- विधवा पेंशन व वृद्धावस्था तथा विकलांगों की सहायता करना।
- कमजोर वर्गों के लिए विशेष कार्यक्रम चलाना।
- आवश्यक वस्तुओं के वितरण के सम्बन्ध में लोगों को जागरूक करना।
- पंचायत क्षेत्र में बनी सार्वजनिक सम्पत्तियों की देखभाल व सुरक्षा।

पंचायती राज सम्बन्धी 73वां संविधान संशोधन विधेयक तो लागू हो गया लेकिन 1992 के बाद इसे ग्रामीण विकास मंत्रालय के एक विभाग के रूप में 11 वर्ष तक संचालित किया जाता रहा। पंचायती राज व्यवस्था के लिए कोई अलग विभाग या मंत्रालय नहीं था। समय बदला, सत्ता बदली और बारी आई कांग्रेस के शासन की प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह ने पंचायती राज के लिए एक अलग मंत्रालय बना दिया। इस मंत्रालय के अस्तित्व में आने से पंचायतों को उनकी शक्तियों और अधिकारों का वास्तविक एहसास हुआ। पंचायती राज मंत्रालय का मुख्य काम पंचायत राज व्यवस्था हेतु केंद्र और राज्य के बेहतर समन्वय को बनाये रखना है। प्रारम्भिक दौर में इसके 16 आयाम निर्धारित थे, लेकिन पंचायती राज पर मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन के बाद इसे गरीबी उन्मूलन और 'सूचना के तकनीकी उपयोग' को जोड़कर अब 18 आयाम कर दिये गये हैं।

राज्यों के पंचायती राज मंत्रियों का पहला सम्मेलन 24–25 जुलाई 2004 को कलकत्ता में हुआ। इसके बाद इसके अनेक सम्मेलन हुए। यू.पी.ए. सरकार ने पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत बनाने और केन्द्र तथा राज्य सरकार के मध्य संबंध स्थापित करने में सफलता प्राप्त की। सभी राज्य सरकारों और संघ राज्यों से केन्द्र सरकार ने यह कहा है कि 2005–06 के अन्त तक वे जिला योजना समितियां गठित कर दें।

समस्या

पंचायती राज व्यवस्था को गांवों की व्यवस्था कहा जाता है और इसका काम है ग्रामीणों को आम समस्या जैसे–बिजली, पानी, शिक्षा, चिकित्सा आदि से निजात दिलाना। इस बात को तो स्वीकार करना ही होगा कि पंचायती राज व्यवस्था से लोगों में चेतना आयी है। अपने–अपने क्षेत्रों में लोगों ने स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से रोजगार के अवसर पैदा किये हैं। लेकिन समस्या आती है भ्रष्टाचार की। अगर भ्रष्टाचार के इस दानव को समाप्त नहीं किया गया तो वह न केवल योजना को अपने लक्ष्य की प्राप्ति करने देगा बल्कि भविष्य में इस तरह की महत्वाकांक्षी योजना की शुरूआत की संभावना खत्म कर देगा। दूसरी प्रमुख समस्या निरक्षरता की है। आप खुद अनुभव करते होंगे कि गांवों के जो प्रधान आज चुने जाते हैं, वे अधिकांशतः अंगूठा छाप होते हैं। इसका लाभ दबंग लोग उठाते हैं। ऐसी ही कुछ स्थिति महिलाओं की है। यह बात अलग है कि महिलाओं की भागीदारी उचित है और उनको पर्दे से बाहर निकालने में भी यह व्यवस्था सहायक है लेकिन निरक्षरता के कारण महिलाओं को अपने पंचायत सम्बन्धी अधिकारों का ज्ञान नहीं है। ये तो आरक्षण का शुक्र है जो महिलाएं चुनी जाती है, वरना 'यह भी एक गम्भीर समस्या होती। महिलाओं के आरक्षण का लाभ उठाकर गांव के दबंग लोग अपनी पत्नियों को चुनाव जिता लेते हैं और सारा काम स्वयं करते हैं। इसलिए महिलाएं केवल रबर की मोहर बन

कर रह जाती है। अतः सरकार को चाहिए कि वह ग्राम पंचायतों के प्रधानों के लिए कुछ योग्यता संबंधी मानदण्ड तय करे। पंचायती राज व्यवस्था को 1.5 दशक लागू हुए हो गया। इसे अनेक मीठे–कडुवे अनुभवों से गुजरना पड़ा। सबसे बड़ी समस्या यह निकलकर आयी कि गांव में आज भी सहभागी बनने की भावना उतनी पैदा नहीं हो पायी जितनी कि लाभार्थी बनने की। किसी योजना में सहयोग करने के बजाय जनता अपने निजी हित की तलाश करती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के 60 वर्ष बीत चुके हैं। देश में जनता के स्तर को ऊंचा करने और अनेक मूलभूत सुविधाएं मुहैया कराने के लिए अनेक प्रयास किये गये लेकिन ये सभी प्रयास शहरों तक सिमटते नजर आये। यही कारण है कि ग्रामीण क्षेत्र की जनता के लिए विकास शब्द सपना बनकर रह गया है। अगर समय रहते गांवों के नियोजित विकास की ओर ध्यान नहीं दिया गया तो परिणाम भयावह होंगे। वर्तमान समय में ग्रामीण क्षेत्र के लिए जो कार्यक्रम चल रहे हैं अगर उनकी रफ्तार यही रही तो आने वाले 4–5 दशकों के बाद स्थिति सुधारना मुश्किल होगा।

पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत सामाजिक न्याय, सामाजिक सद्भाव और ग्रामीण विकास करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। विशेषकर उस दशा में जब ग्रामीण जनता गरीबी और बेरोजगारी का शिकार हो। ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा सुविधाओं का अभाव है, तथा दबंग लोगों का वर्चस्व है जिन्होंने समाज को धर्म और जाति के आधार पर बांट दिया है। कमजोर वर्ग का शोषण और महिला उत्पीड़न तो आम बात है।

भविष्य में सुधार के लिए सुझाव

- ग्राम सभा से सम्बन्धित विषयों से ग्रामीणों को परिचित कराना जिसका माध्यम मुख्य रूप से गैर–सरकारी संगठन हो। प्रत्येक गांव में घर–घर जाकर लोगों को सम्बन्धित जानकारी दी जाय।
- ग्राम सभा की बैठक बुलाने में ईमानदारी बरतनी चाहिए। सामान्यतः देखा जाता है कि ग्रामीणों की संख्या बैठक में सीमित होती है। इस संबंध में महत्वपूर्ण कदम उठाये जाने की आवश्यकता है।
- पंचायतों को तीन अंगों में ठीक उसी प्रकार बांटना चाहिए जैसे– केन्द्र एवं राज्यों के शासन बंटे हुए हैं।
- संविधान में संघ, राज्य और समवर्ती सूची के साथ–साथ एक जिला या ग्राम सूची की भी आवश्यकता महसूस की जा रही है। जिसमें पंचायत द्वारा लगाये जाने वाले करों का स्पष्ट ब्यौरा हो।
- ग्राम पंचायत के सदस्यों को प्रशिक्षण की व्यवस्था के लिए सरकार कदम उठाये।
- राज्य सरकारों को चाहिए कि वे अपना कम से कम 1/5 वां हिस्सा पंचायती राज संस्था को हस्तान्तरित करें।
- ग्राम सभा की बैठक ऐसे समय पर होनी चाहिए जब ग्रामीणों के पास खेती आदि से सम्बन्धित कोई विशेष काम न हो।
- ग्राम सभा की बैठक में लेखपाल, तहसीलदार और नहर विभाग के अधिकारी आदि को भाग लेना चाहिए क्योंकि आज ग्रामीण जन समस्या इन्हीं क्षेत्रों से सम्बन्धित है।
- ग्राम सभा की बैठक वर्ष में दो बार की बजाय कम से कम चार बार होनी चाहिए।
- ग्राम सभा की बैठक में महिलाओं की भागीदारी बढ़ानी चाहिए।
- ग्राम सभा की समस्याओं को जन सम्पर्क में लाना चाहिए।
- ग्राम सभा की बैठक से 10 दिन पहले मुनादी प्रारम्भ कर देनी चाहिए ताकि यह खबर सार्वजनिक हो सके।
- ग्राम सभा में सदस्यों के द्वारा उठाये गये मुद्दों और समस्याओं को ठीक ढंग से निपटाया जाना चाहिए।
- पंचायती राज जन प्रतिनिधियों को सांसदों और विधायकों की भांति वेतन, भत्ते निश्चित किये जाने चाहिए।

पंचायती राज कार्यक्रमों के उद्देश्यों को पूरा करने में नैतिक मूल्यों की भूमिका भी अहम नजर आ रही है। राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण प्रशासन को संवेदनशील बनाना, जन भागीदारी आदि इसकी सफलता के लिए आवश्यक है। अगर यह सब नहीं हुआ तो पंचायती राज को जनता द्वारा जनता के लिए बनाने पर प्रश्न चिन्ह लग सकता है। ग्राम पंचायतों द्वारा जो भी काम हो वह गांव के लोगों के सामने हो और कार्यों के प्रति जवाबदेही हो। लोकतंत्र जब जनसाधारण के हाथों में होगा तब यह गरीबी निवारण समानता और विकास के लिए प्रभावशाली साबित होगा। पंचायती राज अधिनियम के माध्यम से भारतीय शासन व्यवस्था में जो परिवर्तन आया है वह ग्रामीण विकास के लिए उम्मीद की एक नई किरण है। इसके लिए यह आवश्यक है कि पंचायती राज व्यवस्था की शक्तियों एवं अधिकारों का सही ढंग से उपयोग हो। गांधी, नेहरू का ग्रामीण भारत का सपना तभी साकार होगा, जब जनता समाज में व्याप्त, निरक्षरता, गरीबी, जातिवाद और भ्रष्टाचार के भ्रम से बाहर निकलकर सहयोग, जनभागीदारी और कठोर अनुशासन के मार्ग को अपनायें।

(लेखक सिविल कोर्ट सुल्तानपुर में अधिवक्ता हैं)

manish-178@yahoo.co.in

ग्राम–रमनपुर, पो. रायपुर, जिला–सुल्तानपुर–222302 (उ.प्र.)

नाबार्ड : कृषि साख के 25 वर्ष

दुष्यन्त सिंह

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) ने गत माह (जुलाई में) अपने रजत जयंती वर्ष में प्रवेश कर लिया है। कृषि साख की इस प्रधान एजेन्सी ने अपने पिछले 25 वर्ष के सफर में भारतीय कृषि के अर्ध सामंती, अर्ध पूंजीवादी स्वरूप की जटिलताओं के बीच स्व–सहायता समूहों को बैंकों से जोड़ने जैसी पहल की सफलता के कई मुकाम हासिल किये हैं। किसानों के एक बड़े तबके को बैंकिंग सेवा के द्वार तक पहुंचाया है। लेकिन आज उदारीकरण, वैश्वीकरण के दौर में किसानों की आत्महत्याओं ने नाबार्ड को दोराहे पर खड़ा कर दिया है।

हालांकि नाबार्ड के गत कुछ वर्षों के लेखे–जोखे पर नजर डाले तो साफ होता है कि बैंक बदलती परिस्थितियों के बीच छोटे और मंझोले किसानों तक अपनी पहुंच को और बढ़ाने के लिए प्रयासरत है। सरकारी नीति के तहत किसानों को रियायती दर पर मिलने वाले ऋण में बढ़ोत्तरी की जा रही है। इस वर्ष के बजट भाषण में 2,25,000 करोड़ रुपये के रियायती ऋण का लक्ष्य निर्धारित किया गया है जो कि पिछले वित्त वर्ष की तुलना में 35,000 करोड़ रुपये अधिक है। साथ ही 2007–2008 में नये 50 लाख किसानों को बैंकिग प्रणाली से जोड़ने का लक्ष्य रखा गया है। अल्पावधि ऋणों पर भी राहत देने के लिए 1677 करोड़ रुपयों का प्रावधान किया गया है। इन सब के लिए नाबार्ड को 5000 करोड़ रुपये के कर मुक्त ग्रामीण बॉन्ड जारी करने की स्वीकृति मिल गई है।

नाबार्ड के कुल कारोबार में भी 2006–07 में रिकार्ड 20 फीसदी की वृद्धि, इसके प्रयासों को स्पष्ट करती है। बैंक के इतिहास में इसके पहले सालाना कारोबार की वृद्धि दर सामान्यतः 8 से 10 फीसदी के भीतर ही रही थी। वर्ष 2005–06 में बैंक का कुल कारोबार 67,705 करोड़ रुपये का था जो कि 2006–07 में बढ़कर 81000 करोड़ रुपये पर पहुंच गया था।

क्र.स.	पुनर्वित्त ऋण	2005–06	2006–07	वृद्धि
1.	उत्पादन साख पुनर्वित्त	9617	14758	53 प्रतिशत
2.	निवेश साख पुनर्वित्त	33329	34748	4 प्रतिशत
3.	राज्य सरकारों को ऋण	15142	20005	32 प्रतिशत

गत वित्त वर्ष (2006–07) की यह कारोबार वृद्धि तीन क्षेत्रों उत्पादन साख पुनर्वित्त, निवेश साख पुनर्वित्त और ग्रामीण आधारभूत संरचना के विकास के लिए राज्य सरकारों को प्रदान किये जाने वाले ऋण में बढ़ोत्तरी का परिणाम है। इनमें से उत्पादन ऋण फसल के मौसम में अल्प अवधि के लिए विभिन्न सहकारी, ग्रामीण और व्यावसायिक बैंकों के माध्यम से उपलब्ध कराया जाता है और नाबार्ड से इन बैंकों को पुनर्वित्त मिल जाता है। इसी प्रकार निवेश ऋण मध्यम और दीर्घ अवधि के लिए उपलब्ध कराया जाता है।

वर्ष 2005–06 की तुलना में वर्ष 2006–07 में उत्पादन साख पुनर्वित्त में 53 फीसदी, राज्य सरकारों को दिये जाने वाले ऋण में 32 फीसदी और निवेश साख पुनर्वित्त में 4 फीसदी का इजाफा हुआ है।

बैंक से कर्ज लेकर उन्नत खेती करता हुआ किसान

देश में कृषि के अर्ध सामंती, अर्ध पूंजीवादी और पुरातन ढ़ांचे में पिस रहे छोटे और सीमांत किसानों को ध्यान में रखकर 12 जुलाई 1982 को स्थापित किए गए नाबार्ड का एक अहम योगदान स्व–सहायता समूहों को व्यवस्थित ऋण व्यवस्था से जोड़कर उन्हें एक नई पहचान देता है। वस्तुतः भारत में नाबार्ड ने ही पिछले एक दशक में

'सूक्ष्म वित्त आन्दोलन' को तैयार और पोषित किया है। सूक्ष्म वित्त अत्यधिक गरीब लोगों को दी जाने वाली छोटी कर्ज राशियां होती हैं। इसमें समूहों में संगठित गरीब लोगों को छोटा–मोटा काम करने में मदद मिलती है।

नाबार्ड ने स्व–सहायता समूहों के जरिये बैंकिंग सेवा को गरीबों, खासकर महिलाओं तक पहुंचाने की अहम जिम्मेदारी को गम्भीरता से निभाया है। वर्ष 1992 में मात्र 500 स्व–सहायता समूहों से शुरू किया गया नाबार्ड का यह कार्यक्रम आज 25 लाख समूहों तक पहुंच चुका है। वर्ष 2006–07 के दौरान 3.85 लाख स्व–सहायता समूहों को ऋण व्यवस्था से जोड़ने का लक्ष्य रखा गया लेकिन वर्ष के अंत तक यह आंकड़ा 3.12 लाख नये और 2.41 लाख पहले से मौजूद स्व–सहायता समूहों तक पहुंच गया। इस दौरान इन समूहों को विभिन्न बैंकों के जरिये 2922 करोड़ रुपये का ऋण मिला जिसमें से 1161 करोड़ रुपये नाबार्ड ने बैंकों को पुनर्वित्त के तौर पर उपलब्ध कराया। 31 मार्च 2007 तक कुल 25.5 लाख स्व–सहायता समूहों को कुल मिलाकर 14320 करोड़ रुपये का बैंक ऋण प्रदान किया गया। इसमें से नाबार्ड ने 5320 करोड़ रुपये बैंकों को पुनर्वित्त के रूप में उपलब्ध कराया।

'स्व–सहायता समूह' आन्दोलन का रेखांकित किया जाने वाला एक और पहलू गैर दक्षिण भारतीय राज्यों की बढ़ती भागेदारी है। इन राज्यों का वर्ष 2000–01 में केवल 29 फीसदी की भागेदारी का आंकड़ा 2006–07 में बढ़कर 50 फीसदी पर पहुंच गया है। इसके अतिरिक्त नाबार्ड ने नौ राज्यों में एक स्तर तक विकसित हो चुके स्व–सहायता समूहों को छोटे उद्योग समूह में बदलने के लिए एक पाइलेट योजना भी शुरू कर दी है।

नाबार्ड का एक और अहम योगदान ग्रामीण अर्थव्यवस्था की जटिलताओं की पहचान कर रणनीति तैयार करना रहा है। उदाहरण के तौर पर देश के ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली 40 फीसदी जनसंख्या गैर कृषि कार्यों में संलग्न है। नाबार्ड ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए अपने निवेश ऋण पुनर्वित्त का एक चौथाई हिस्सा गैर कृषि क्षेत्र के लिए सुनिश्चित कर दिया है। गैर कृषि क्षेत्र की मुख्य गतिविधियों में कृषि प्रसंस्करण (55 फीसदी) और ग्रामीण आवास (17 फीसदी) शामिल हैं।

दूसरी ओर कृषि में संलग्न ग्रामीण जनसंख्या के 80 फीसदी हिस्से में भूमिहीन, सीमांत, अर्ध सीमांत और छोटे किसान आते हैं। ये किसान वित्तीय से लेकर टेक्नोलोजी तक सभी स्तरों पर पिसते हैं। इन्हीं किसानों को ध्यान में रखकर नाबार्ड ने जमीनी स्तर पर उपलब्ध ऋण के 40 फीसदी हिस्से तक अपना उत्पादन ऋण पुनर्वित्त बढ़ा दिया है। नाबार्ड ने ऐसे उपाय किये हैं कि ज्यादा से ज्यादा कॉपरेटिव बैंक रियायती दर पुनर्वित्त प्राप्त करने के योग्य बन सकें।

नाबार्ड ने ग्रामीण विकास योजनाओं को एकीकृत करने के उद्देश्य से अपने 'रजत जयन्ती वर्ष' में विलेज एडोप्शन एण्ड टोटल डेवलपमेंट (वी ए टी डी) नामक एक योजना शुरू करने का

विलेज एडोप्शन एण्ड टोटल डेवलेपमेंट : रजत जयन्ती पहल

इस योजना के तहत नाबार्ड अपने रजत जयंती वर्ष में 400 गांवों के सर्वांगीण विकास की जिम्मेदारी उठायेगा। यह योजना ग्रामीण भारत के एकीकृत विकास को ध्यान में रखकर शुरू की जा रही है। नाबार्ड के प्रमुख वाई. एस. पी. थोराट ने इसके उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहा कि भारत में विकास टुकड़ों–टुकड़ों में होता है, इसलिए नाबार्ड ने अपनी मौजूदगी वाले 400 जिलों में से सभी में एक गांव को एकीकृत ढंग से विकसित कर आदर्श गांव बनाने की जिम्मेदारी उठाई है।

इस योजना के तहत स्वसहायता समूहों, डेयरी, वित्त इकाइयों, आधारभूत संरचना और परामर्श जैसी विकास से जुड़ी सभी पहलों पर एक साथ ध्यान दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त कर्ज परामर्श, वित्तीय शिक्षा, मूल्य सूचना केन्द्र, परीक्षण एवं गुणवत्ता प्रमाणीकरण जैसी चीजों का भी एकीकरण किया जायेगा। 400 जिलों में स्वयं एक–एक गांव की जिम्मेदारी उठाने के साथ–साथ नाबार्ड ने शीर्ष बैंकों से भी दो–दो गांवों का भार उठाने के लिए कहा है।

नाबार्ड ने इस योजना को हर वर्ष 1200 अन्य गांवों तक विस्तारित करने का भी फैसला किया है। बैंक के अनुसार इससे देश के सभी गांवों को धीरे–धीरे एकीकृत विकास की प्रक्रिया में शामिल कर लिया जाएगा।

गांवों की विकास योजना में वित्तीय पहलू को पूरी तरह समझने के लिए सामाजिक और आर्थिक संरचना योजनाओं को एकीकृत करने का फैसला ग्रामीण भारत के लिए उम्मीद की एक किरण के तौर पर देखा जाना चाहिए।

भी फैसला किया है। इस योजना के तहत नाबार्ड शुरू में 400 गांवों का भार उठाएगा।

लेकिन देश में महाजनी ऋण जाल के शोषण में पिसकर अपनी जान गंवा रहे किसानों की दृष्टि से देखें तो नाबार्ड अभी भी जमीनी हकीकत से दूर नजर आता है। गांव के स्तर पर किसानों के लिए महाजन या अन्य धनी लोग ही ऋण के मुख्य स्रोत हैं। इन लोगों से ऋण लेने में किसानों को कागजी प्रक्रिया के लम्बे झंझट से भी नहीं गुजरना पड़ता है लेकिन ऋण 120 फीसदी से लेकर 240 फीसदी की उच्च दर से मिलता है, जिसे किसान के लिए आसानी से चुका पाना संभव नहीं होता है। उस पर यदि फसल चौपट हो जाए या उसका सही मूल्य नहीं मिल सके तो समय पर ऋण चुकाना पहाड़ बन जाता है। इसके बाद शुरू होता है महाजनी शोषण का सिलसिला जिसकी परिणति कई बार किसानों की आत्महत्याओं के रूप में नजर आती है।

बैंक सहायता से सोयाबीन की लहलहाती फसल

नाबार्ड की उपलब्धियों को नजर अंदाज किए बगैर भी कहा जा सकता है कि यह किसानों, खासकर छोटे किसानों की वित्तीय कठिनाईयों को व्यवस्थित कर निपटा पाने से अभी काफी दूर है। किसान क्रेडिट कार्डों की संख्या भले ही बढ़ रही हो लेकिन सच्चाई यही है कि छोटे किसान कर्ज के लिए महाजनों पर ही निर्भर हैं। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा हाल में जारी आंकड़ों के अनुसार भारत में प्रति 100 वयस्क लोगों में से केवल 31 लोगों के पास ही बैंक खाते हैं। यानि देश की 69 फीसदी वयस्क आबादी अभी भी बैंकिंग सेवाओं से वंचित हैं।

वस्तुतः समस्या केवल वित्त के स्तर तक ही सीमित नहीं है। सिंचाई, भूमि उर्वरता, बीज गुणवत्ता, मशीनी आधुनिकीकरण के साथ–साथ आवास, कृषि, शिक्षा और आय के अन्य स्रोतों का अभाव कृषि संकट से पूरी तरह जुड़ा हुआ है और इन सब के ऊपर सरकारी अधिकारियों और सरकारी व्यवस्था का बेगानापन। हालांकि नाबार्ड ने भी अपनी नीतियों को वित्त व्यवस्था तक ही सीमित नहीं रखा है। नाबार्ड ने अपने निवेश ऋण पुनर्वित्त का तीन चौथाई हिस्सा कृषि को प्रोत्साहित करने वाले अन्य क्षेत्रों के लिए सुनिश्चित कर रखा है। जिसमें से एक बड़ा हिस्सा खेती के मशीनीकरण (21 फीसदी) का है। इसके बाद सूक्ष्म वित्त (15 फीसदी), लघु सिंचाई (7.6 फीसदी) और डेयरी विकास (5.7 फीसदी) का नम्बर आता है।

नाबार्ड 'राष्ट्रीय विकास बोर्ड' के साथ मिलकर देश के 325 जिलों में दुग्ध उत्पादों के उत्पादन, प्रसंस्करण और मार्केटिंग जैसी गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए एक राष्ट्रीय डेयरी योजना भी शुरू करने जा रहा है। नाबार्ड के पास करीब छः हजार करोड़ रुपये का ग्रामीण आधारभूत संरचना विकास कोष भी है। इसके अतिरिक्त नाबार्ड ने वाटरशेड विकास, जन जातीय विकास कोष जैसी कई पहले की हैं। बैंक 200 करोड़ रुपये का एक 'वाटरशेड विकास कोष' स्थापित कर इस गतिविधि को देश के संकटग्रस्त 31 जिलों तक बढ़ा रहा है। इससे भूमि की उर्वरता बढ़ेगी, लेकिन यह एक छोटी शुरुआत ही कही जा सकती है। इस तरह नाबार्ड का 'जनजातीय विकास कोष' भी मात्र 50 करोड़ रुपये का है।

लेकिन भारत के साथ–साथ वैश्विक परिदृश्य पर नजर डालें तो 'सूक्ष्म वित्त आन्दोलन' उम्मीद की एक बड़ी किरण नजर आती है। पूरी दुनिया में गरीब लोग विशेषकर महिलाओं को भयावह गरीबी से मुक्ति दिलाने में सूक्ष्म वित्त एक अहम जरिया बन चुका है। भारत के दीन–हीन तबके को इससे काफी सहारा मिल सकता है। भारत में कृषि ऋण का करीब एक चौथाई हिस्सा सहकारी इकाइयों की देख–रेख में आता है और ये इकाइयां 50 फीसदी कृषि ऋण खाते भी संभालती हैं। ऐसे में नाबार्ड को इन सरकारी इकाइयों को और मजबूत बनाने के उपाय करने चाहिए। नाबार्ड लघु अवधि की सहकारी साख व्यवस्था (एस.टी.सी.सी.एस) को पुनर्जीवित करने के लिए 10 राज्यों में एक पैकेज शुरू भी कर चुका है। अब राज्य सरकारों को भी सरकारी सोसायटी कानून में आवश्यक संशोधन कर इसे प्रभावी बनाने के लिए आगे आना चाहिए।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)
ई–मेलः dushyant@gmail.com
ई–21,22 गली नम्बर–1, पुल प्रहलादपुर, बदरपुर, नई दिल्ली–110044

कृषि का उद्भव और विकास

रमेश कुमार सिंह

कृषि हमारी सभ्यता एवं संस्कृति के साथ–साथ विकास की भी जननी रही है। यह भौतिक महत्व के अलावा जीवन की एक प्रणाली है जो कि मानवीय मूल्यों में अनुपम एवं अद्वितीय है। इसकी कोई एकमात्र तथा सरल उत्पत्ति नहीं हुई वरन् विभिन्न कालों और अनेक स्थानों पर इसका क्रमिक विकास हुआ जिसके बारे में कोई ठोस ज्ञान नहीं है। उन्नीसवीं शताब्दी के विद्वानों ने मानव विकास के चार चरणों की परिकल्पना की है :

जंगली अवस्था

इतिहास गवाह है कि मानव का उद्भव सम्भवतः पूर्वी गोलार्ध के उष्णकटिबंधी वनों के क्षेत्र में हुआ। पश्चिमी गोलार्द्ध में मनुष्य बहुत बाद में पहुंचा और उत्तरी अमेरिका के मेक्सिको होते हुए दक्षिणी अमेरिका तक गया। मनुष्य इस काल में एक स्थान पर न रहकर घूमता–फिरता था। इसका प्रमाण विश्व में व्यापक रूप से पाये गए जीवाश्म है। मनुष्य के जीवाश्म अवशेषों के साथ ही मिले पत्थरों के टुकड़े तथा अन्य प्राणियों के जीवाश्मों से ज्ञात होता है कि पाषाण युग में मनुष्य ने पत्थर के औजारों और हथियारों का प्रयोग आरम्भ कर दिया था, जो आज से लगभग दस हजार वर्ष पूर्व तक होता रहा। इन गुटिका औजारों व हथियारों का उपयोग शिकार करने के लिए ही होता होगा। प्रस्तर युग का मनुष्य आखेटक तथा खाद्य संग्राहक था। आदि मानव वन्य जीवों का शिकार करता था और वह जंगलों के कंद–मूल और फल–फूल एकत्रित करके भोजन प्राप्त करता था। वह सर्वभक्षी था, भोजन की खोज में घूमते जंगली मानव को निश्चय ही अन्य प्राणी भी अपना शिकार बनाते होंगे। और खाद्य की उपलब्धि भी सीमित रही होगी, क्योंकि उस काल में मनुष्य ने वृक्षों से उतर कर और गुफाओं से बाहर निकलकर धरती पर रहना प्रारम्भ कर दिया था। प्रस्तर युग में ही मनुष्य ने पत्थरों को रगड़कर आग जलाना सीखा और भोजन पकाने में अग्नि का उपयोग शुरू किया। ऐसे प्रमाण मिले हैं कि उस काल में जंगली मनुष्य भारत और पाकिस्तान के उत्तरी पहाड़ी क्षेत्रों की नदी घाटियों में घूमते–फिरते थे।

खानाबदोशी अवस्था

कालान्तर में अग्नि के आविष्कार से मनुष्य को उसकी ऊर्जा की शक्ति की पहचान हुई और तब उसे वन्य जन्तुओं से सुरक्षा का साधन भी मिल गया। इसके साथ ही उसे भोजन के नये स्रोत भी मिल गये। अब वह आग के द्वारा जंगलों तथा घास के मैदानों को जलाकर अपने रहने योग्य बनाता था तथा वहां की प्राकृतिक निधियों का उपयोग कुछ काल तक करता था और कुछ समय पश्चात् अपने निवास को बदल देता था। इस प्रकार वह एक बंजारे का जीवन व्यतीत करता रहा। उस काल में आदमी छोटे–छोटे झुंडों में रहता था और सम्भवतः इस बीच उसने कुछ जानवरों को पालतू भी बनाया।

कृषि की प्रारम्भिक अवस्था

कृषि का प्रारम्भ सबसे पहले कब और कहां से हुआ इसका केवल अनुमान ही लगाया जा सकता है। पाषाण युग से सम्बन्धित प्रमाण से ज्ञात होता है कि मानव उस युग में खेतों को जोतने और फसल पैदा करने के लिए पत्थर तथा लकड़ी के औजार प्रयोग करता था, किन्तु आधुनिक काल–निर्धारण तकनीकों द्वारा ज्ञात हुआ है कि 7000 ई. पू. के आसपास कृषि का विकास हो चुका था। इस काल में मनुष्य का एकमात्र व्यवसाय खेती करना तथा पशुपालन था और वह प्रकृति पर आश्रित रहता था। धीरे–धीरे कृषि के विकास, पशुपालन में प्रगति तथा धातुकर्म के ज्ञान से मनुष्य ने खानाबदोशी जीवन छोड़कर छोटे–छोटे समूहों में रहना शुरू कर दिया। अब मनुष्य की प्रकृति पर निर्भरता कम हो चली थी और सुरक्षा व भोजन की नियमित आपूर्ति होने पर जनसंख्या में वृद्धि हुई। इसके परिणामस्वरूप आदमी ने विश्व के विभिन्न भागों में समूहों में रहना प्रारम्भ किया। कृषि के लिए तथा अन्य आवश्यकताओं के लिए पानी भी जरूरी था, इसलिए मानव सभ्यताओं का विकास नदियों के किनारे ही प्रारम्भ हुआ। इनमें से कुछ के ही भग्नावशेष प्राप्त हुए है, जिनमें सिंधु घाटी, नील घाटी, टिग्रिस व फरात घाटी तथा माया सभ्यताएं प्रमुख है। काफी समय के पश्चात् मनुष्य जंगलों को साफ करके, वन्य पशुओं को मारकर व उन्हें पालतू बनाकर, कृषि और पशुपालन के सहारे मैदानों में आ गया और प्रकृति के संसाधनों का भरपूर उपयोग करने लगा। इस काल में धीरे–धीरे कृषि का विकास होने लगा।

- अधिकाधिक मानव उपयोगी पौधों (जैसे – गेहूं, जौ, कपास, ज्वार–बाजरा, विभिन्न चावल, केला, गन्ना आलू, सरसों, मूंगफली, तिल इत्यादि) की खेती की प्रारम्भिक विधियों की खोज हुई।

- खेती के लिए भूमि को जोतने, खेत तैयार करने तथा भूमि की उर्वरता बनाये रखने के लिए खाद का प्रयोग शुरू हुआ।
- अनेकानेक मानव उपयोगी जानवरों (जैसे घोड़ा, बैल, गाय, भैंस, बकरी, भेंड़, कुत्ता इत्यादि) को लोगों ने पालना प्रारंभ किया।
- धातुकर्म का विकास, लोहे के हल तथा लकड़ी के पहिये, कुल्हाड़ी, हंसिया व हथौड़े का निर्माण के साथ श्रम विभाजन और स्थायी बस्तियों का निर्माण।
- गांवों में आर्थिक, सामाजिक और ग्रामीण सभ्यता का विकास, सिंचाई के साधनों की खोज तथा फसलों और पालतू जानवरों के उपयोग के बेहतर तरीकों की खोज की जाने लगी।

कृषि का विकास

प्राचीन काल में सम्भवतः जनसंख्या की वृद्धि, भोजन की मांग बढ़ाने के साथ उस काल के लोगों ने अपने–अपने आवास खेतों के निकट बनाए और इस प्रकार कृषि के साथ स्थाई बस्तियां प्रारम्भ हुई। जैसे–जैसे लोग एक स्थान पर स्थायी रूप से रहने लगे उनकी सभ्यता अधिकाधिक विकसित होने लगी तथा वातावरण के साधनों पर उनकी मांग उत्तरोत्तर बढ़ती चली गई। समुदाय में नई विधियों का विकास किया। विश्व के विभिन्न भागों में कृषि के प्रसार के साथ फसल उत्पादन के प्रत्येक पहलू की प्रगति हुई। आधुनिक युग में भाप, तेल और जल–विद्युत के चालक शक्ति के रूप में उपयोग होने से खेती में मशीनों का प्रयोग बढ़ने लगा। इसके परिणामस्वरूप खेतों की उत्पादकता प्रति एकड़ या हेक्टेयर बढ़ने के साथ अधिकाधिक जमीन में खेती होने लगी। कृषि के मशीनीकरण से उत्पादन बहुत बढ़ा और खेती के विभिन्न उत्पाद बड़ी तादाद में बेचे जाने लगे जिससे इनका अन्तर्देशीय तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार होने लगा। इस प्रकार एक ओर संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और आस्ट्रेलिया जैसे देशों से गेहूं का विश्व के अन्य देशों को निर्यात होने लगा, तो दूसरी ओर संसार के बहुत से औद्योगिक देश जैसे इंग्लैण्ड, नीदरलैण्ड और डेनमार्क अपनी बहुत बड़ी जनसंख्या की आवश्यकताएं कृषि के विभिन्न उत्पादों को आयात करके पूरा करने लगे।

ईसा पूर्व काल में भारतीय कृषि की विभिन्न अवस्थाएं

क्र.सं.	काल/संस्कृति	अवधि	विकास की उपलब्धियां
1.	पाषाण युग	लगभग 1000000 ई.पू.	मानव का उद्भव।
2.	पुरापाषाण युग	700000 ई.पू. से 200000 ई.पू.	गुटिका (पत्थर) औजारों का बनाना, अग्नि का अविष्कार
3.	मध्य पाषाण युग	10000 से 7500 ई.पू.	आखेटक तथा खाद एकत्रक मनुष्य, जानवरों का शिकार, कंद–मूल तथा फल–फूल एकत्र करना, भारत व पाकिस्तान की पहाड़ी क्षेत्रों की नदियों घाटी में घूमते रहने वाला आदमी।
4.	नव प्रस्तर काल	7500 ई.पू. से 6500 ई.पू.	पत्थरों के परिष्कृत औजारों का निर्माण, कृषि की खोज तथा जानवरों का पालतूकरण।
5.	मेसोपोटामिया की संस्कृति	3000 ई.पू. से 1700 ई.पू.	हल एवं पहिये बनाना, धातुकर्म बनाना, अन्य पशुओं का पालतूकरण।
6.	ब्लूचिस्तान का पूर्व हड़प्न संस्कृति समु.	26250 ई.पू. ये 2300 ई.पू.	भेड़, बकरी, गधा आदि का पालतूकरण, मिट्टी के बर्तनों की संस्कृति।
7.	पाकिस्तान में हड़प्न संस्कृति (सिंध और पश्चिमी पंजाब)	2300 ई.पू. से 1600 ई.पू.	मोहनजोदड़ों और हड़प्पा की संस्कृति, कृषि का अच्छा विकास, धातु औजार का निर्माण और पक्के मकानों का निर्माण।
8.	भारत में हड़प्पा संस्कृति का विकास	2200 ई.पू. से 1600 ई.पू.	पंजाब, हरियाणा, जम्मू, उत्तर प्रदेश, राजस्थान तथा मध्य प्रदेश में हड़प्पा संस्कृति का फैलाव। गेहूं, जौ, कपास, चना, मटर तिल और सरसों की खेती। भैंस, हाथी, ऊंट, गधे, सुअर और कुछ पक्षियों का पालतूकरण।
9.	कांस्य काल	1750 ई.पू. से 1500 ई.पू.	आर्यो का भारत में प्रवेश, घोड़े का पालतूकरण, घोड़े का खेती का प्रयोग।
10.	वैदिक काल	1500 ई.पू. से 1000 ई.पू.	ग्रामीण संस्कृति का विकास, सिंचाई और कृषि में उन्नति, चारवाही एवं आखेटक संस्कृति प्रारम्भ।
11.	उत्तर वैदिक काल	1000 ई.पू. से 600 ई.पू.	कृषि का विस्तार, लोहे के हल के फाल का अविष्कार तथा जंगलों को काटना।

आधुनिक युग की मशीनी एवं अत्यन्त विशिष्ट कृषि के विकास में मुख्य रूप से निम्न कारकों की भूमिका रही है :–

- कृषि के लिए सर्वथा नवीन पौधों की खोज तथा उनका प्रयोग।
- यांत्रिक आविष्कारों और शक्ति का खेती में अधिकाधिक उपयोग।
- फसल उत्पादन में उन्नति, पौधों तथा पशुओं की सुरक्षा के लिए विज्ञान की उपलब्धियों का अनुप्रयोग।
- कृषि विज्ञान की शिक्षा का व्यापक प्रसार।
- किसानों द्वारा कृषि की उत्तम विधियों को ग्रहण करना तथा विभिन्न फसलों की उन्नत व सुधरी किस्मों के प्रति चेतना।

कृषि को हम दो भागों में वर्गीकृत कर सकते हैं – भौगोलिक संरचना के आधार पर और भूमि के स्वामित्व एवं संगठन के आधार पर।

भौगोलिक संरचना के आधार पर कृषि का वर्गीकरण

भूमि का ढाल, मिट्टी की संरचना, जलवायु (वर्षा, तापमान, सूर्य का प्रकाश, हवा इत्यादि) मिट्टी की उर्वरा शक्ति तथा सामाजिक आर्थिक कारक जैसे श्रमिक बाजार, सिंचाई, यातायात यंत्र और मशीनें आदि इन सभी कारकों के परिणामस्वरूप विश्व में प्रचलित कृषि विधियां निम्नलिखित है :

- **झूम खेती या स्थानांतरीय कृषि** – झूम कृषि एक प्रकार की स्थानांतरीय कृषि है जिसमें कृषि कार्य का स्थान निरंतर परिवर्तित होता रहता है। कृषि करने के लिए खेतों की घास, फूस झाडियां आदि को जलाकर साफ कर दिया जाता है। कुछ समय तक खेती करने के उपरांत उस टुकड़े को छोड़कर अन्यत्र इसी प्रक्रिया से खेती की जाती है ताकि वह भूमि खंड पुनः अपनी उर्वरता प्राप्त कर ले। यह मुख्यतः मध्य अफ्रीका, दक्षिण पूर्व एशिया के गर्मतर वनों में और भारत में अरूणाचल प्रदेश में प्रचलित है।
- **रोपण कृषि** – रोपण कृषि का अर्थ ऐसी कृषि से है जिनमें एक ही फसल का उत्पादन बड़ी मात्रा में किया जाता है। यह कारखाना उत्पादन पद्धति से मिलती जुलती है। इस प्रकार की कृषि के लिए प्रायः बड़े–बड़े फार्म, अधिक पूंजी विनियोग तथा उत्पादन में आधुनिक व वैज्ञानिक तकनीक अपनाई जाती है। इसकी मुख्य फसलें– रबर, तैल–ताड़, कहवा, चाय, नारियल, कपास, पटसन, अन्नास, केला तथा गन्ना है। ऐसी कृषि एशिया, अफ्रीका और अमेरिका के उष्णकटिबंधी प्रदेशों के कई भागों में की जाती है।
- **स्थानबद्ध कृषि** – आजकल संसार में अधिकतर खेती इसी प्रकार से की जाती है। स्थायी रूप से रहने वाला किसान और उसका परिवार मिल–जुलकर ऐसी खेती करते हैं। ऐसी खेती में फसल का परिवर्तन होता है। किसान भूमि तथा फसलों की अधिक देखभाल करता है। वह अधिक उत्पादन बढ़ाने के लिए खेती में विकसित विधियों तथा विभिन्न प्रकार के औजारों का प्रयोग करता है। वह खेतों पर पशुओं को रखता है। जिनसे दूध व मांस मिलने के अतिरिक्त उन्हें बोझा ढोने और खेती के काम में भी लाया जाता है।
- **जीविका कृषि** – ऐसी कृषि, जो सम्पूर्ण रूप से खेती करने वाले परिवार या उसी क्षेत्र में खप जाती है जहां फसलें उगाई जाती है, जीविका कृषि कहलाती है। जब तक कृषि का मुख्य उद्देश्य केवल स्थानीय उत्पादक की आवश्यकताओं को पूरा करना बना रहता है, उस समय तक हर प्रकार की कृषि जीविका कृषि कहलाती है। गहन जीविका कृषि मूलतया दो प्रकार ही होती है– एक तो वह जिसमें धान की खेती का प्रभुत्व होता है और दूसरी कृषि में अन्य फसलें जैसे गेहूं, दालें, मक्का, ज्वार–बाजरा, सोयाबीन, गन्ना, कंद वाली फसलें और शाक–भाजी पैदा की जाती है। धान की गहन कृषि एशिया के अधिकांश देशों में की जाती है।
- **गहन कृषि** – गहन कृषि में अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रति ईकाई भूमि पर पूंजी और श्रम अधिक मात्रा में लगाया जाता है। इसमें अधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरक, अच्छे किस्म के बीज, कीटनाशक, सिंचाई तथा हरी खाद का भरपूर प्रयोग किया जाता है। कृषि की यह प्रणाली संसार के उन क्षेत्रों में अपनाई जाती है जहां प्रति व्यक्ति भूमि बहुत कम है, जहां खेती योग्य भूमि सीमित है और जहां जनसंख्या का घनत्व अधिक है। चीन, जापान, बंगलादेश, फिलीपींस, वियतनाम, मलेशिया, थाईलैंड और भारत में गहन कृषि होती है।
- **मिश्रित कृषि** – इस प्रकार की कृषि में फसलें उगाना और पशुपालन दोनों ही कार्य साथ–साथ होते हैं। इसमें दोनों का पूर्ण समन्वय किया जाता है। इसमें कृष्य भूमि का लगभग 20 प्रतिशत भाग चारे की उपज और लगभग 80 प्रतिशत भूमि फसलों के उत्पादन को दी जाती है। चारे की फसल पर वही ध्यान दिया जाता है जो उन फसलों पर किसान देता है।
- **विस्तृत कृषि** – बड़े–बड़े खेतों या जोतों पर मुख्यतः यांत्रिक खेती को विस्तृत खेती कहते हैं। इसमें श्रमिकों का उपयोग कम, प्रति हेक्टेयर उपज अपेक्षाकृत कम, कुल उत्पादन अधिक और प्रतिव्यक्ति उत्पादन अपेक्षाकृत अधिक होता है। इस प्रकार की कृषि मुख्यतः विरल आबादी क्षेत्रों में ही की जाती है।
- **बागवानी कृषि** – फलों, सब्जियों, जड़ी–बुटियों, सुगंधयुक्त पौधों, मसालों, नारियल, काजू, कोको, आदि की खेती बागवानी कृषि कहलाती है। मिट्टी और जलवायु की विविधता के कारण बागवानी फसलों की पैदावार की अच्छी सम्भावनाएं है। विश्व में भारत काजू का सबसे बड़ा उत्पादक एवं निर्यातक देश है।

• **डेयरी फार्मिंग** – दूध और उससे निर्मित सामानों को अलग–अलग रूप में प्रयोग किया जाता है, जैसे– दही, घी, पनीर, मक्खन, छेना तथा तमाम तरह की मिठाइयां। दूध और उससे सम्बन्धित उत्पादों के उद्योग दूध उद्योग के नाम से जाना जाता है। दुग्ध उद्योग के विकास के लिए किया जाने वाला अध्ययन 'दुग्ध विज्ञान' कहलाता है। विश्व में दूध उत्पादन में भारत का स्थान पहला तथा अमेरिका का दूसरा स्थान है।

• **अन्य प्रकार की कृषि** – उपरोक्त कृषि के अलावा अन्य महत्वपूर्ण कृषि का प्रकार निम्नलिखित है–

ऐरोपोनिक – पौधों को हवा में उगाना
एपीकल्चर – मधु मक्खी पालना
फ्लोरीकल्चर – फूल विज्ञान
पोमोलॉजी – फल विज्ञान
वर्मी कल्चर – केंचुआ पालन
सेरी कल्चर – रेशम उद्योग
मोरी कल्चर – रेशम उद्योग हेतु शहतूत उगाना
ओलेरी कल्चर – सब्जी विज्ञान
विटी कल्चर – अंगूर की खेती
पिसी कल्चर – मत्स्य पालन

भूमि के स्वामित्व और संगठन पर कृषि का वर्गीकरण

खेती करने का प्रबन्ध भी कृषि पर प्रभाव डालता है। खेती का संगठन इस बात पर आधारित है कि भूमि को किस प्रकार रखा और प्रयोग किया जा रहा है। भूमि का स्वामी स्वयं किसान हो सकता है अथवा वह बटाई पर खेती कर सकता या वह खेत पर केवल खेतिहर मजदूर के रूप में काम कर सकता है। इस आधार पर विश्व में प्रचलित व्यवस्था निम्नलिखित है :–

• **व्यक्तिगत खेती** – इसमें किसान स्वयं अपनी भूमि का मालिक होता है। इस भूमि पर खेती की सारी क्रियाएं जैसे जोतना, बोना, फसल काटना और कृषि उत्पादों को बाजार में बेचना आदि सभी काम किसान खुद ही करता है। इस प्रकार की खेती में लाभ या हानि की पूरी जिम्मेदारी स्वयं किसान की होती है। इसमें लागत तथा उपज का लेखा–जोखा उसी को रखना पड़ता है। विश्व के अधिकांश देशों में व्यक्तिगत खेती का बहुत प्रचलन है।

• **सहकारी खेती** – सहकारी खेती में सभी सदस्य किसान स्वेच्छा से अपनी कृष्य भूमि एक दूसरे के साथ एकत्र करते हैं और सभी मिल–जुलकर खेती के विभिन्न कार्यों को प्रजातांत्रिक ढंग से करते हैं। अतः सहकारी खेती किसानों का एक ऐसा स्वेच्छा प्रेरित संघ है जो मानवीय और भूमि साधनों का सर्वोत्तम उपयोग करने में अपने अधिकतर सदस्यों का सहयोग खेती की विविध क्रियाओं में प्राप्त करता है। संसार के कुछ विकसित देशों जैसे स्वीडन, नार्वे, नीदरलैंड, बेल्जियम और डेनमार्क में सहकारी आन्दोलन बहुत ही सफल रहा है।

• **सामूहिक कृषि** – सामूहिक कृषि एक ऐसी प्रेरित सहकारी उत्पादन संघ है जो उत्पादन साधनों के सामाजिक स्वामित्व और सामूहिक श्रम के आधार पर कार्य करता है। जिसमें मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण बिल्कुल समाप्त कर दिया जाता है। ऐसी खेती में भूमि चिरस्थाई पट्टे के आधार पर किसानों द्वारा बनाई फार्म की प्रबन्धक समिति को दी जाती है। फार्म के सभी उपकरण पशु और इमारतें फार्म की सम्पति होते हैं। भूमि पर अधिकार किसानों का न होकर राज्य और समाज का होता है। ऐसी प्रणाली रूस में प्रचलित है।

• **पूंजीवादी कृषि व्यवस्था** – इस व्यवस्था के अन्तर्गत भूमि पर मिश्रित पूंजी वाली कम्पनियों का अधिकार और सम्बन्ध रहता है। भूमि का स्वामी (पूंजीपति) श्रमिकों की सहायता से भूमि पर वैज्ञानिक ढंग से बड़े पैमाने पर खेती करता है। यह व्यवस्था निजी लाभ के लिये होती है, श्रमिकों के हित की रक्षा के लिए नहीं। ऐसी व्यवस्था इंग्लैंड एवं संयुक्त राज्य अमेरिका में बहुत प्रचलित है।

• **राजकीय कृषि व्यवस्था** – इस व्यवस्था के अन्तर्गत देश की समस्त भूमि पर राज्य का स्वामित्व होता है तथा समस्त क्षेत्र को बड़े–बड़े फार्मों में विभाजित करके उसमें वैज्ञानिक ढंग से वेतनभोगी कर्मचारियों द्वारा खेती कराई जाती है। ऐसी व्यवस्था में अत्यधिक मशीनीकरण द्वारा बड़े पैमाने पर उत्पादन होता है। इन कार्यों पर बहुधा विशेषीकरण तथा अनुसंधान कार्य होता है। भारत में भी कुछ प्रयोगात्मक राजकीय फार्म स्थापित किए गये हैं जहां कृषि सम्बन्धी अनुसंधान कार्य होता है।

इस प्रकार आज अनेकानेक वैज्ञानिक तथा तकनीशियन कृषि की विविध आयामी प्रगति और अनुसंधान में संलग्न है। जिससे अधिक से अधिक कृषि उत्पाद बढ़ सके तथा विभिन्न प्रकारों की जमीनों एवं जलवायु में उग सकें। अतः अधुनातन कृषि अत्यधिक गतिशील हो गई है और निकट भविष्य में उसके रूपों, प्रस्तावों तथा प्रणालियों में क्रान्तिकारी परिवर्तनों की सम्भावनायें है। बस जरूरत है कृषि में व्याप्त संरचनात्मक दोषों को दूर करके आधुनिक कृषि प्रणाली के साथ समुचित समन्वय की ताकि इसका समुचित लाभ हमारे छोटे से छोटे किसान तक पहुंच सके।

(लेखक अर्थशास्त्र के व्याख्याता हैं)
एम. डी. पब्लिक स्कूल कैम्पस, ईस्ट आफ एम आई जी, सेक्टर–3, बहादुरपुर हाऊसिंग कालोनी, पटना–800026

सुगंधित धान : मुनाफे की खेती

वीरेन्द्र कुमार

भारत की आधे से अधिक आबादी के लिए धान न केवल जीवन का पोषक है बल्कि पौष्टिकता का मुख्य आधार भी है। धान भारत की प्रमुख और अग्रणी खाद्यान्न फसल है। सुगंधित धान अपनी उच्च गुणवत्ता के कारण भारत में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आज सुगंधित धान किसानों की आय के लिए एक मुख्य फसल बन चुकी है। सुगंधित धान अपने उत्कृष्ट पौष्टिक गुणों के कारण अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बहुत लोकप्रिय है। भारत अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में सुगंधित धान का मुख्य उत्पादक और अग्रणी निर्यातक है। सुगंधित धान विदेशी मुद्रा अर्जित करने का भी मुख्य कृषि उत्पाद है। स्थानीय बाजारों में भी सुगंधित धान की मांग सामान्य धान की अपेक्षा अधिक ही रहती है। सुगंधित धान का उत्पादन करने वाले प्रमुख राज्यों में पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और उत्तरांचल हैं। हमारे देश में धान की औसत उत्पादकता 29.3 क्विंटल/हेक्टेयर है जबकि कई अन्य देशों में इसकी औसत उपज 60 क्विंटल/हेक्टेयर तक है। किसान अपनी फसल से भरपूर लाभ लेना चाहता है परन्तु वह अपने इस सपने को साकार करने में असफल रहता है क्योंकि उसके पास उत्कृष्ट उत्पादन लेने की तकनीकों का अभाव होता है। भारत में सुगंधित धान उत्पादन का भविष्य उज्ज्वल है जो कम क्षेत्र से अधिक मुनाफा बढ़ाने में सहायक होगा। अतः इसे किसानों में और अधिक लोकप्रिय बनाने की जरूरत है। प्रस्तुत लेख में दी गई तकनीकी जानकारी को अपनाकर किसान भाई सुगंधित धान की उत्पादकता एवं लाभ में अधिकाधिक वृद्धि कर सकते हैं।

सुगंधित धान की उन्नतशील प्रजातियां

आज भारत में सुगंधित धान की दर्जनों से ज्यादा उन्नतशील किस्में किसानों के लिए उपलब्ध है। सुगंधित धान की ये किस्में पौष्टिक, आकर्षित दानों वाली, लागत साधनों के प्रति संवेदी और मध्यम अवधि वाली है। वर्तमान में सुगंधित धान की अधिक उपज देने वाली कई किस्में विकसित की गई हैं। जो पूसा बासमती – 1 की अपेक्षा 11 से 17 प्रतिशत अधिक उपज देती है। सुगंधित धान की अधिक उपज प्राप्त करने के लिए उन्नतशील और नवीनतम प्रजातियों का चयन अति आवश्यक है। प्रजातियों का चुनाव करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

- अपने खेत के लिए अनुमोदित किस्मों का ही चयन करें।
- बीज किसी विश्वसनीय और प्रमाणित संस्थाओं से ही प्राप्त करना चाहिए।
- रोगरोधी और कीट प्रतिरोधी प्रजातियों को ही बोयें।
- नवीनतम एवं उन्नतशील किस्मों का ही प्रयोग करे।
- स्थानीय बाजार की मांग तथा साधन सीमा के अनुसार ही किस्मों का चुनाव करें।
- बीज स्वस्थ, शुद्ध और साफ–सुथरा होना चाहिए।
- बीज की अंकुरण क्षमता कम से कम 80–90 प्रतिशत अवश्य हो।
- खेत की मिट्टी और सिंचाई जल की गुणवत्ता को ध्यान में रखकर किस्मों का चुनाव करे।

सुगंधित धान की नर्सरी उगाने की विधि

सुगंधित धान की नर्सरी के लिए जल्दी–जल्दी सिंचाई की आवश्यकता होती है। अतः नर्सरी ऐसे स्थान पर बनाए जहां पानी की पर्याप्त सुविधा हो। एक हेक्टेयर में धान की रोपाई करने के लिए 600–800 वर्गमीटर नर्सरी का क्षेत्र पर्याप्त होता है। इसके लिए सुगंधित किस्मों के 22–24 कि.ग्रा. स्वस्थ बीज की आवश्यकता होती है। नर्सरी क्षेत्र में एक हजार कि.ग्रा. अच्छी सड़ी

बालियां निकलने की अवस्था में सुगन्धित धान की फसल

गोबर की खाद, 12.5 कि.ग्रा. यूरिया, 15.0 कि.ग्रा सिंगल सुपर फॉस्फेट व 15.0 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश को समान रूप से डालकर मिट्टी में अच्छी तरह से मिला दें। बीज को रात भर पानी में भिगोकर रखें। इससे बीजों का अंकुरण शीघ्र और अच्छा होता है। नर्सरी में पानी लगाते समय इस बात का ध्यान रखें कि बीज बहुत देर तक पानी में न पड़ा रहे अन्यथा बीजों के सड़ने का अंदेशा बना रहता है। नर्सरी में शुरू के समय पानी का स्तर बहुत ही कम रखना चाहिए। जैसे–जैसे पौध बैठने लगे तथा पौधों में पत्तियां निकलने लगें तो पानी के स्तर को धीरे–धीरे बढ़ाते रहना चाहिए। नर्सरी में खरपतवार नजर आएं तो उन्हें समय–समय पर हाथ से उखाड़ देना चाहिए। इससे रोपाई के समय पौध के साथ घास भी रोप दिए जाने की संभावना कम रहती है। वैसे तो प्रमाणित संस्था से खरीदा गया बीज उपचारित होता है उसे उपचारित करने की आवश्यकता नहीं होती है। परन्तु यदि बीज उपचारित नहीं है तो 10 कि. ग्रा. बीज की 3 ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लीन + 20 ग्राम कैपटान को 20 लीटर घोल में 12 घण्टों के लिए भिगोएं। यह फसल को सभी बीज जनित रोगों से सुरक्षा प्रदान करता है।

रोपाई का समय एवं विधि

पौध उखाड़ने से पहले नर्सरी में अच्छी तरह से पानी भर लें जिससे खेत की मिट्टी नम व मुलायम हो जाए ताकि पौधे उखाड़ने के समय पौधों की जड़ों को किसी प्रकार का नुकसान न पहुंचे। जब नर्सरी में धान के पौधे 25 दिनों के हो जाएं तो उसके तुरंत बाद रोपाई कर देनी चाहिए। 30 दिनों से ज्यादा पुरानी पौध में फुटाव कम होता है जिसके परिणामस्वरूप उपज में भारी कमी आ जाती हैं। अतः समय पर रोपाई करना बहुत आवश्यक है। रोपाई करते समय एक स्थान पर केवल एक ही पौधा लगाएं। सुगंधित धान की रोपाई पंक्तियों में 20 से.मी की दूरी पर तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सें.मी. रखनी चाहिए। रोपाई के समय खेत में 3 से 4 सें.मी. पानी भरा रहना चाहिए जिससे पौधों की रोपाई करने में सुविधा रहती है। प्रति इकाई क्षेत्र में पौधों की पर्याप्त संख्या बनाए रखने के लिए एक वर्गमीटर में कम से कम 45–50 पौधे लगाने चाहिए। पौधों की रोपाई पूरब–पश्चिम दिशाओं में करनी चाहिए जिससे सभी पौधों को सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में और लम्बी अवधि तक मिलता रहे। देर से रोपाई की दशा में तथा पौध अधिक पुरानी हो जाने पर पंक्ति से पंक्ति की दूरी घटाकर 15 सें.मी. कर देनी चाहिए। इसके अलावा एक स्थान पर कम से कम 2 से 3 पौधे लगाएं। रोपाई के 12 से 14 दिनों बाद यदि किसी स्थान पर पौधे सूख गए हों तो वहां पर नए पौधे लगा देने चाहिए।

खाद और उर्वरकों की संतुलित मात्रा

सुगंधित धान की अच्छी गुणवत्ता की अधिक पैदावार लेने के लिए मुख्य पोषक तत्वों (एन.पी.के.) के अतिरिक्त कई अन्य सूक्ष्म तत्वों की भी आवश्यकता होती हैं जिनमें जिंक व आयरन प्रमुख सूक्ष्म पोषक तत्व हैं। खेत की मिट्टी की जांच के बाद ही खाद एवं उर्वरकों की मात्राएं सुनिश्चित करनी चाहिए। सुगंधित धान के लिए नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश क्रमशः 120 : 60 : 60 कि. ग्रा. प्रति हेक्टेयर की संस्तुति वैज्ञानिकों द्वारा की गई है। सुगंधित धान में नाइट्रोजन की मात्रा की एक तिहाई यानी 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा फॉस्फोरस और पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा अन्तिम जुलाई के समय समान रूप से डाल देनी चाहिए। नाइट्रोजन की उपरोक्त मात्रा में से 20 कि.ग्रा. डी.ए.वी. व 20 कि.ग्रा. यूरिया के माध्यम से देनी चाहिए। 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन रोपाई के 15–20 दिनों बाद खड़ी फसलों में डाल देनी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष मात्रा (40 कि.ग्रा.) को रोपाई के 35 से 40 दिनों बाद प्रयोग करना लाभदायक पाया गया है। सुगंधित धान में नाइट्रेजन को सही समय पर देने से कल्ले जल्दी फूटते हैं जिसके परिणामस्वरूप पैदावार में वृद्धि होती है। सुगंधित धान में पोटाश का प्रयोग बालियों की लम्बाई, बालियों में दानों की संख्या, दानों की चमक व सुदृढ़ता एवं उनका भार तथा रोग प्रतिरोधकता को बढ़ाने में सहायक होता है।

पानी जमाव वाले क्षेत्रों में कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट व यूरिया का प्रयोग करने से ये पानी में घुलकर मृदा की निचली सतहों में चले जाते हैं जो पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाता है। इन क्षेत्रों में अमोनियम नाइट्रोजन वाले उर्वरकों जैसे अमोनियम सल्फेट का प्रयोग करना चाहिए। यदि अमोनियम सल्फेट उपलब्ध न हो तो नीम, करंज व महुआ की खल की पतली परत यूरिया के ऊपर चढ़ाकर नाइट्रोजन की उपयोग दक्षता को बढ़ाया जा सकता है। ऐसी परिस्थितियों में यूरिया का रिसाव निचली परतों में कम से कम होता है। इसके लिए 6 कि.ग्रा. यूरिया और 1 कि.ग्रा. खली का सम्मिश्रण बनाया जा सकता है। इसके अलावा गंधक और लौह युक्त यूरिया का प्रयोग करके भी नाइट्रोजन उपयोग दक्षता को बढ़ाया जा सकता है। यूरिया उर्वरक के ये सभी अवयव बाजार में आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। चूना वाली मृदाओं में सिंगल सुपर फॉस्फेट और डाई अमोनियम फॉस्फेट (डी.ए.पी.) का प्रयोग अधिक प्रभावी पाया गया है। जबकि अम्लीय मृदाओं में राक फॉस्फेट का प्रयोग भी लाभदायक पाया गया है। यह सस्ता भी है और आसानी से उपलब्ध हो जाता है तथा इसकी प्रयोगविधि भी बहुत सुगम व आसान है।

मृदा की उर्वरा शक्ति में संतुलन बनाए रखने के लिए सुगंधित धान की फसल में गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, मुर्गी खाद, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद, फसल अवशेष प्रबंध और अन्य जैविक खादों का प्रयोग अपेक्षित है। इससे पौधे को मुख्य और सूक्ष्म पोषक तत्व पर्याप्त और लम्बी अवधि तक मिलते रहते हैं। इस दिशा में किए गए अनुसंधानों में फसल उत्पादों की गुणवत्ता और पौष्टिकता भी

अधिक पाई गई है। जैविक खादें रोपाई के 15–20 दिन पहले खेत तैयार करने के समय मिट्टी में अच्छी तरह मिला देनी चाहिए। जैविक खादों का मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है। किसान यदि इन खादों में से किसी एक जैविक खाद का प्रयोग करे तो ऐसी दशा में नाइट्रोजन की मात्रा 40 कि.ग्रा. कम कर दें। नाइट्रोजन का एक तिहाई भाग रोपाई के समय, शेष मात्रा दो बराबर भागों में बांटकर रोपाई के क्रमशः 15–20 और 35–40 दिनों बाद देनी चाहिए।

रोपाई के 75 दिन बाद सुगन्धित धान की लहलहाती फसल

इसके अलावा धान की फसल में रासायनिक उर्वरकों के साथ जैविक उर्वरकों का प्रयोग भी लाभदायक रहता है। जीवाणु उर्वरकों का प्रयोग करने से धान की उपज में 15–25 प्रतिशत तक की वृद्धि हो सकती है। जीवाणु उर्वरक सस्ते व आसानी से उपलब्ध हैं तथा इनकी प्रयोगविधि भी बहुत सुगम है। जीवाणु उर्वरकों द्वारा पौधों को नाइट्रोजन और अन्य पोषक तत्व अधिक समय तक उपलब्ध होते रहते हैं। जैविक उर्वरकों के प्रयोग से फसल उत्पादों की गुणवत्ता में भी सुधार होता है। धान की फसल में प्रयोग होने वाले जैविक उर्वरकों में एजोटोबैक्टर, नील हरित शैवाल, फास्फोबैक्टिया, माइकोराइजा व एजोला प्रमुख हैं। इस अवस्था में नाइट्रोजन की मात्रा 35–40 कि.ग्रा./हे. कम कर देनी चाहिए।

मिट्टी की जांच के आधार पर यदि जिंक की कमी लगे या रोपाई से लेकर 30 दिन तक खड़ी फसल में जिंक की कमी के लक्षण दिखाई पड़ने पर 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर के हिसाब से प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट का स्प्रे भी किया जा सकता है। घोल बनाने के लिए 5 किग्रा. जिंक सल्फेट तथा 2.5 कि.ग्रा. अनबूझे चूने को 600–700 लीटर पानी में घोलकर प्रति हे. की दर से खड़ी फसल में छिड़काव करें। धान की फसल में जस्ते की कमी से खैरा नामक रोग हो जाता है। यह रोग मृदा में जस्ते की कमी के कारण से होता है। इस रोग में सर्वप्रथम पौधों की निचली पत्तियां पीली पड़नी शुरू हो जाती हैं। इसके बाद पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बे उभरने लगते हैं। रोगग्रस्त पौधों में कल्ले भी कम फूटते हैं और अन्ततः पौधों की वृद्धि रुक जाती है।

लौह तत्व (आयरन) भी धान की फसल के लिए एक महत्वपूर्ण सूक्ष्म पोषक तत्व है। धान की फसल में इस तत्व की कमी से 'पौध क्लोरोसिस' हो जाती है। पौध क्लोरोसिस रोग के लक्षण सबसे पहले नई पत्तियों पर नजर आते हैं। उससे नई तथा कोमल पत्तियों के सिरे सफेद पड़ने शुरू हो जाते हैं। क्लोरोसिस के लक्षण दिखने पर अधिक सिंचाई करें। इसके अलावा खड़ी फसल में 1 किग्रा. फैरस सल्फेट और 0.5 कि.ग्रा अनबूझे चूने को 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से 3–4 बार छिड़काव एक–एक सप्ताह के अन्तराल पर करें।

सिंचाई

सुगंधित धान की खेती सामान्यतः सिंचित क्षेत्रों में ही की जाती है। जहां सिंचाई का पूरा प्रबंध हो। सुगंधित धान के लिए जल्दी–जल्दी सिंचाई की आवश्यकता होती है। धान की अधिक पैदावार लेने के लिए सभी क्रान्तिक अवस्थाओं जैसे कल्ले फूटना, फूल आना और बालियों में दाना बनने के समय सिंचाई करनी चाहिए। रोपाई के समय खेत में 3 से 4 सें.मी. तक पानी खड़ा रहना चाहिए जिससे रोपे गए पौधे आसानी से जड़ पकड़ लें। रोपाई के बाद जैसे–जैसे पौधे जड़ पकड़ने लगे और हरे–भरे होने लगे वैसे–वैसे पानी की मात्रा बढ़ाते रहना चाहिए। परन्तु इस बात का ध्यान रखें कि खेत में 5 से.मी. से अधिक पानी न खड़ा रहे। पौधों में फुटाव एवं बालियां निकलने की अवस्थायें अति संवेदनशील होती हैं क्योंकि इस समय पानी की कमी से पौधे सर्वाधिक प्रभावित होते हैं जिससे बालियों में दानों की संख्या और उनका आकार अत्यंत कम हो जाता है। अन्ततः उपज में भारी कमी आ जाती है। धान की फसल में सिंचाइयों की संख्या मिट्टी के प्रकार, वर्षा की मात्रा और सिंचाई के लिए दिए गए पानी की मात्रा पर निर्भर करती है। धान फसल में अधिकतम जल उपयोग दक्षता बनाए रखने के लिए रोपाई के 25 दिनों बाद तक मृदा में दरारें न पड़ने दें। यदि एक बार मृदा में दरारें बन गईं तो दिए गए सिंचाई जल का अधिकांश भाग मृदा की निचली सतहों में रिसकर नष्ट हो जाता है। साथ ही ऐसी अवस्था में खेत में खरपतवारों के पनपने की संभावना बढ़ जाती है। फसल की कटाई करने के 10–15 दिन पहले खेत से पानी निकाल दें। ऐसा करने से दाने अच्छी तरह पक जाते हैं और फसल के गिरने की संभावना रहती है।

खरपतवार नियंत्रण

सामान्यतः फसल की वृद्धि के साथ ही कई प्रकार के चौड़ी व संकरी पत्तियों वाले खरपतवार उग आते हैं। जो फसल में दिए गए पानी और पोषक तत्वों के अधिकांश भाग का अवशोषण कर लेते हैं जिसके फलस्वरूप धान की गुणवत्ता और पैदावार में भारी कमी आ जाती है। इस प्रकार किसान को अपनी फसल का अपेक्षित मूल्य नहीं मिल पाता है। धान की फसल में रोपाई के प्रथम 25 से 30 दिनों तक का समय फसल–खरपतवार स्पर्धा का सबसे क्रान्तिक काल (समय) माना जाता हैं। यदि इस समय खरपतवारों की रोकथाम नहीं की जाती है तो फसल की पैदावार में 10–40 प्रतिशत तक की कमी आ जाती है। यह फसल में खरपतवारों की सघनता और उनके प्रकार पर निर्भर करती है। धान की फसल में खरपतवारों को आसानी से व कम खर्च में नष्ट करने के लिए रोपाई के प्रथम 20 दिनों तक खेत में 3 से 4 सें.मी. पानी खड़ा रहने दें। इससे खरपतवारों के बीजों को अंकुरण का मौका नहीं मिल पाता है और जो अंकुरित हो जाते हैं पनप नहीं पाते हैं। रोपाई वाले धान में साधारणतः सांवक, मकरा, मौथा, डेलिस घास, जलभगरा, कोन्दरा, कनकवा, दूधी और हजार दाना नामक खरपतवार मुख्य रूप से पाये जाते हैं। इन खरपतवारों में सांवक सबसे ज्यादा हानिकारक है। यह धान के पौधे से मिलता–जुलता होता है अतः धान के खेत में इस खरपतवार को पहचानना बड़ा मुश्किल होता है। आजकल मजदूरों की कम उपलब्धता और उनकी अधिक मजदूरी के कारण खरपतवारों को नियंत्रण करने के लिए बहुत से शाकनाशी बाजार में उपलब्ध हैं।

निमेटोड़ रोकथाम की सस्य तकनीक

धान की फसल में निमेटोड़ का भी प्रकोप प्रमुख रूप से होता है। इसके कारण पौधों की जड़ों में गांठों का निर्माण हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप पौधे मृदा से पानी और पोषक तत्वों का अवशोषण आसानी से नहीं कर पाते हैं। धान के सूत्राकृमि (रूटनोट निमेटोड़) की रोकथाम के लिए निमेटोड़ गांठे रहित शुद्ध बीज का प्रयोग करना चाहिए। इसके अलावा उचित फसल चक्र अपनायें और गर्मियों में मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करें। धान–गेहूं फसल चक्र के अन्तर्गत धान के स्थान पर तिल या अरहर की फसल उगाकर निमेटोड़ की रोकथाम की जा सकती है। इसी प्रकार रबी के मौसम में गेहूं के स्थान पर चना या सरसों को उगाकर निमेटोड़ की समस्या को कम किया जा सकता है।

प्रमुख कीट एवं उनका नियंत्रण

धान की फसल में लगने वाले प्रमुख कीट और उनके नियंत्रण का विवरण निम्न प्रकार है।

- **जड़ की सूंडी** – इसके नियंत्रण के लिए 25 कि.ग्रा. फयूराडोन 3 जी प्रति हेक्टेयर का प्रयोग यूरिया उर्वरक में मिलाकर खड़े पानी में छिड़काव करें।
- **पत्ती लपेट सूंडी** – एण्डोसल्फान (35 ई.सी.) 1.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- **धान का गंधी वग** – यह कीड़ा दूधिया दाने और पत्तियों का रस चूसता है फलस्वरूप दाने पूरी तरह से नहीं भर पाते हैं। इस कीट को छूने से बहुत तीखी गंध निकलती। यदि फसल में अधिक प्रकोप हो तो एण्डोसल्फान (35 ई.सी.) की 1.5 लीटर मात्रा को 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।
- **तना छेदक** – इस कीड़े की सूंडी ही नुकसान पहुंचाती है जिससे पौधों का मुख्य तना सूख जाता है। इसके नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटो फास (36 ई.सी.) 1.4 लीटर/ हे. की दर से 500–700 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। इसके अलावा गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करके भी इस कीट को नष्ट किया जा सकता है। फूल आने की अवस्था पर छिड़काव दिन में 11 बजे के बाद ही करें ताकि फूलों में नुकसान न पहुंचे।

रोग एवं उनका निदान

धान की फसल में लगने वाले प्रमुख रोग पौध गलन, तना गलन, भूरे धब्बों का रोग (ब्लास्ट), पत्ती का झुलसा रोग और पत्ती रेखा रोग है। धान में फंफूद एवं जीवाणुनाशक दवाओं से बीज उपचार अत्यंत आवश्यक है जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है। इस उपचार से पौध गलन, ब्लास्ट, जीवाणु पत्ती अंग–मारी इत्यादि रोगों के नियंत्रण में मदद मिलती है। जिस खेत में बीमारी लगी हो उसका पानी दूसरे खेत में न जाने दें। देर से रोपाई करने पर ब्लास्ट रोग के लगने की संभावना बढ़ जाती है।

कटाई

सुगंधित धान की अधिक उपज देने वाली किस्मों के संदर्भ में जब दानों में नमी की मात्रा 20–22 प्रतिशत रह जाए और 88 प्रतिशत बालियां तथा तने पीले पड़ जाएं तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। ज्यादा देर से कटाई करने पर फसल के गिरने और बालियों से दाने झड़ने का अंदेशा रहता है।

निष्कर्ष

इस तरह यदि किसान भाई उपरोक्त लिखित बातों को ध्यान में रखकर सुगंधित धान की वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी को अपनाते हैं तो उनको लगभग 55–60 क्विं/हे. धान की पैदावर हो सकती है।

(लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में तकनीकी अधिकारी हैं।)
ई–मेलः v.k.agro@yahoo.co.in
सस्य विज्ञान संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,
नई दिल्ली–110012

भारत के आर्थिक विकास में कृषि की भूमिका

अनिल प्रताप सिंह

भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहां की कुल जनसंख्या का 70 प्रतिशत गांवों में निवास करता है तथा कृषि कार्य में ही संलग्न है और उसकी आजीविका का साधन कृषि ही है। ऐसे देश का स्थायी आर्थिक विकास बिना कृषि विकास के सम्भव नहीं है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। अनेक उद्योगों को कच्चा माल कृषि से ही प्राप्त होता है। देश की राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान घटता जा रहा है। 1950–51 में जहां राष्ट्रीय आय में कृषि का भाग 56 प्रतिशत था वहीं वर्तमान में यह प्रतिशत गिरकर लगभग 30 प्रतिशत हो गया है। इस गिरावट का प्रमुख कारण कृषि क्षेत्र में निवेश की कमी है जिससे उत्पादकता में कमी हो गयी है। जबकि रोजगार में कृषि के प्रतिशत में कोई गिरावट नहीं आयी हैं। अर्थात् भारत में आज भी लगभग 70 प्रतिशत लोग कृषि में ही रोजगार प्राप्त किये हैं। विकास की दृष्टि से यह उचित प्रतीत नहीं होता है। खाद्यान्न उत्पादन में 1950–51 की तुलना में वर्तमान में लगभग चार गुना वृद्धि हुई है लेकिन जनसंख्या की वृद्धि दर भी लगभग उतनी ही है इसलिये अतिरिक्त खाद्यान्न की स्थिति देश में नहीं आ पा रही है। भारत में श्रम की औसत उत्पादकता विकसित देशों से बहुत पीछे है। जहां जर्मनी में लगभग 3500 डालर है, अमेरिका में 2500 डालर है वहीं भारत में यह लगभग 150 डालर है। ऐसा देश जिसकी अर्थव्यवस्था का आधार कृषि है और वहां की कृषि आज भी पिछड़ी अवस्था में हो तथा प्रकृति के सहारे ही कृषि कार्य हो रहा हो तो उस देश के स्थायी आर्थिक विकास की कल्पना बिना कृषि के विकास के करना उचित प्रतीत नहीं होता।

आर्थिक संवृद्धि के कृत्रिम विशेषणों ने हमारी दृष्टि इतनी बदल दी है कि हम बुनियादी तत्वों के बिना स्थिर विकास की इमारत खड़ी करने को आतुर हो रहे हैं। कृत्रिम विशेषणों पर आधारित विकास प्रक्रिया का सबसे अधिक प्रभाव कृषि क्षेत्र पर पड़ा है। देश की आजादी के 58 वर्ष बाद भी हमारा किसान आर्थिक कठिनाइयों से जूझता हुआ आत्महत्या तक करने के लिये विवश हो रहा है। भूख व गरीबी का दंश झेलते हुए परिवार, हाड़ की ठठरी बने मानव, रोटी के लिये तरसते बालक आज भी बहुतायत में दिख रहे हैं। कृषक बाजार में अपने जीवन को बेचने पर विवश होने लगे हैं। पिछले ही वर्ष महाराष्ट्र में चिंगापुर के नन्दगांव खंडेश्वर और पुसत तालुका के यवतमाल गांव के किसानों ने सामूहिक रूप से अपने गुर्दे बेचने के लिये एक बाजार आयोजित करने का निर्णय लिया था। इतना ही नहीं इसी के पड़ोसी गांव के लोगों ने गांव के बाहर बोर्ड लगा रखा था, जिस पर लिखा था कि यह गांव गिरवी रख लो और हमें सामूहिक आत्महत्या करने की अनुमति दे दो। ऐसी स्थिति में हम अपने देश के किस आर्थिक सुधार में लगे हैं? क्या ऐसे किसानों का अर्थव्यवस्था की वृद्धि में कोई योगदान नहीं है? और क्या वास्तव में भारत जैसे देश में कृषि क्षेत्र को समृद्ध बनाये बिना अर्थव्यवस्था का स्थायी विकास किया जा सकता है? किसानों की यह स्थिति किसी एक राज्य की नहीं है बल्कि अधिकांश राज्यों के किसान इस समस्या से जूझ रहे हैं, फर्क सिर्फ इतना है कि कहीं के किसानों की वेदना उजागर हो जाती है और कहीं के किसानों का दर्द राजनैतिक शोर में दब जाता है।

वर्तमान परिस्थिति में ग्रामीण व्यक्ति कृषि कार्य में दिलचस्पी नहीं ले रहा है। वह शहरों में रोजगार तलाश रहा है, क्योंकि उन्हें कृषि क्रिया लाभदायक नहीं लग रही है। लाभदायक हो भी कैसे, जब आज भी कृषि उत्पाद ही एक मात्र ऐसा उत्पाद है जिसकी कीमत उत्पादक अर्थात् किसान नहीं तय करता बल्कि सरकार और बिचौलिये तय करते हैं जबकि अन्य सभी उत्पादों की कीमत उत्पादक स्वयं तय करता है। जब उत्पादक के उत्पादन का मूल्य दूसरा कोई तय करेगा तो उत्पादक को कितना लाभ होगा इसकी कल्पना की जा सकती है। कृषि जिसे हम अर्थव्यवस्था की रीढ़ कहते हैं, उसे करने वाला किसान यदि सुखी नहीं है तो इसका सीधा अर्थ है कि हमारी रीढ़ कमजोर हो रही है। 59वें दौर के राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के आंकड़े बताते हैं कि उत्तर प्रदेश के 24 प्रतिशत किसानों की दिलचस्पी अब कृषि में नहीं रही, राष्ट्रीय स्तर पर यह प्रतिशत 27 है। यह वास्तव में अत्यन्त गंभीर समस्या है, जिसका समाधान यदि समय रहते न निकाला गया तो परिणाम बेहद नकारात्मक होंगे।

भारत सरकार कृषि विकास के प्रति अति गंभीर दिख रही है। इन्द्रधनुषीय क्रान्ति की बात कृषि में की जा रही है लेकिन व्यवहारिक धरातल पर यह बात सत्य साबित होती दिखाई नहीं देती। जिस प्रकार विश्व व्यापार संगठन का शिकंजा देश पर

कसता जा रहा है। पेटेंट अधिनियम लागू होता जा रहा है। इसमें छोटे और गरीब किसान किसी प्रकार आगे नहीं बढ़ पायेंगे। हमारी कृषि भी विकसित देशों के हाथों में गिरवी हो जायेगी। जिस प्रकार विदेशी उन्नत बीज का प्रयोग हमारे देश में बढ़ता जा रहा है जिसकी विशेषता है कि वह अच्छा उत्पादन तो दे रहा है लेकिन उसे पुनः बीज के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता है। ऐसे में किसान विदेशी बीजों पर निर्भर होता जा रहा है और एक दिन ऐसा आएगा जब हमारा किसान बीज के लिये दूसरों पर निर्भर हो जायेगा।

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा कृषि से सम्बन्धित दृष्टिकोण को देखने से तो यही लगता है कि उत्तर प्रदेश की सरकार कृषि विकास के प्रति अति गंभीर है लेकिन व्यवहारिक धरातल पर यह बात सच साबित होती दिखायी नहीं देती। सरकार का केन्द्रीय विषय है–खाद्यान्न उत्पादन के मामले में राज्य को न केवल आत्म निर्भर बनाकर खाद्यान्न सुरक्षा की गारंटी प्रदान करना बल्कि राज्य को राष्ट्र के अन्नागार के रूप में रूपान्तरित करना, नकदी फसलों और संबंधित क्रिया कलापों के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक संवृद्धि सुनिश्चित करना तथा स्वच्छ और प्रदूषण मुक्त वातावरण के माध्यम से ग्राम्य जीवन में गुणात्मक विकास करना। राज्य के कुल 29.71 मिलियन हेक्टेयर कृषि योग्य क्षेत्र में से 17.48 मिलियन हेक्टेयर ही निबल कृषि क्षेत्र है और इसमें से भी 69 प्रतिशत भाग ही सिंचित है तथा लगभग 2 मिलियन हेक्टेयर से अधिक जमीन अभी भी बंजर पड़ी है। किसान अभी भी पारम्परिक तरीके से कृषि करते हैं। केवल 34 प्रतिशत कृषक परिवार ही आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी की जानकारी रखते हैं। इनमें से भी अधिकांशतः बड़े किसान हैं। छोटे एवं मझोले किसान प्रत्यक्ष तौर पर सरकारी प्रयासों और सुविधाओं का लाभ लेने से वंचित हैं। कमोवेश यही स्थिति देश के अधिकांश राज्यों की है।

एशियन टाइगर कहे जाने वाले दक्षिणी एशिया के देश कोरिया आदि की अर्थव्यवस्था ध्वस्त हो गयी क्योंकि उनके पास कृषि का मजबूत आधार नहीं था। तीव्र औद्योगीकरण के पश्चात् भी देश दिवालिया हो गये, दूसरे विकसित देशों के हाथों की कठपुतली बन कर रह गये। वहीं भारत की अर्थव्यवस्था को हम हाथी की उपमा दे सकते हैं। जिस प्रकार विशालकाय हाथी छोटी–छोटी चोटों को सहने में सक्षम होता है और अपनी एक निश्चित गति से गंतव्य तक पहुंचने के लिये चलता रहता है उसी प्रकार भारत देश जिसके पास कृषि का मजबूत आधार है वह छोटी–मोटी घटनाओं से प्रभावित हुये बिना अपने पथ पर निरन्तर अग्रसर होता रहेगा। ऐसे मजबूत कृषि आधार वाले देश का आर्थिक विकास कृषि के विकास से ही सम्भव होगा।

कृषि सभी उद्योगों की जननी और मानव जीवन की पोषक रही है। औद्योगीकरण कृषि विकास की ही देन है। विकसित राष्ट्र इंग्लैण्ड, जर्मनी, जापान आदि में कृषिगत विकास ने तीव्र औद्योगीकरण के लिये सुदृढ़ आधार प्रदान किया है। भारत को भी अपने स्थायी आर्थिक विकास के लिये कृषि विकास की नयी योजनाओं का निर्माण एवं उनका सुचारु क्रियान्वयन करना होगा। सुदृढ़ आर्थिक सुधार तो तब होगा जब प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षा मुहैया हो जाए जिसका कि नितान्त अभाव है। सन् 2001 की जनगणना के अनुसार हमारे देश की साक्षरता का प्रतिशत 65.38 है। इस प्रतिशत में ऐसे लोग भी सम्मिलित हैं जो केवल अपना नाम लिख सकते हैं। स्वास्थ्य सुविधाओं का अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों में नितान्त अभाव है। सामाजिक सुरक्षा के मामले में हम बहुत पीछे हैं। देश का आर्थिक सुधार करने के लिये सर्वप्रथम देश की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करना आवश्यक है। बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये कृषि विकास पर ध्यान देना अति आवश्यक है।

आर्थिक विकास के लिये आर्थिक उदारीकरण का चक्र जब से प्रारम्भ हुआ है तब से निरन्तर गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों का प्रतिशत बढ़ रहा है। आर्थिक उदारीकरण के पूर्व यह प्रतिशत लगभग 28–29 था जो वर्तमान में बढ़कर 40 प्रतिशत तक पहुंच गया है। इस उदारीकरण से एक तरफ धनाड्य वर्ग और अधिक धनी होता जा रहा है तथा निर्धन वर्ग और अधिक निर्धन हो रहा है। गांव के किसान की स्थिति आज भी दयनीय बनी हुई है। किसान को न तो समय से अच्छे बीज मिल रहे हैं, न ही उर्वरक उपलब्ध हो रहा है और न ही पर्याप्त बिजली मिल रही है, ऐसे में किसान कृषि कार्य को सुचारु रूप से कैसे कर सकता है। किसान किसी प्रकार परिश्रम करके जो फसल उत्पादित कर रहा है उसकी उचित कीमत भी किसान को नहीं मिल पा रही है। इसका लाभ बिचौलिया ले रहा है, क्योंकि किसान के यहां जब फसल उत्पादित होती है, तो उसकी फसल की कीमत कम हो जाती है किसान इस कम कीमत पर भी अपनी फसल बेचने के लिये मजबूर होता है क्योंकि उसके पास भण्डारण की उपयुक्त सुविधा नहीं है तथा वह किसी न किसी के कर्ज में फंसा है जिसे चुकाने के लिये भी उसे कम कीमत पर अपनी फसल बेचना मजबूरी बन जाती है। जिस देश का किसान इतने झंझावात से जूझ रहा हो, पूरा तन किसी भी मौसम में ढ़का न रहता हो, दो वक्त की रोटी हमेशा उपलब्ध न हो, ऐसे किसानों वाले देश का आर्थिक विकास कभी कृषि विकास के बिना सम्भव नहीं है।

सुझाव

भारत का स्थायी एवं समृद्ध आर्थिक विकास तभी सम्भव है जब गांधीजी के विचारों पर ध्यान दे कर गांवों को समृद्ध किया जायेगा। गांव खुशहाल होगा, किसान खुशहाल होगा तभी देश का सम्पूर्ण विकास होगा। अतः देश के आर्थिक विकास के लिये कृषि को विकसित करने की आवश्यकता है। भारत की कृषि को विकसित करने के लिये नयी योजनाओं की आवश्यकता है। कृषि को हम प्रकृति पर ही निर्भर न होने दें बल्कि कृत्रिम साधनों का विकास करके कृषि की प्रकृति पर निर्भरता को कम करने का प्रयास किया जाय। भारत में आर्थिक सुधार के लिये सरकार के द्वारा निरन्तर प्रयास किया जा रहा है तथा इस आर्थिक सुधार के लिये कृषि विकास पर भी ध्यान दिया जा रहा है। तरह–तरह की योजनाएं बनायी जा रही हैं, लेकिन सभी योजनाएं मात्र कागजी नाव साबित हो रही हैं। आज हमारे समाज की पहचान भ्रष्टाचार, आतंकवाद, अपहरण, बलात्कार, हत्या, चोरी एवं डकैती से है। राजनीति एवं नौकरशाही में ऊपर से लेकर नीचे तक फैला भ्रष्टाचार कोढ़ की तरह समाज को तिल–तिल कर गला रहा है। ऐसी स्थिति में देश का आर्थिक विकास एवं कृषि विकास कैसे हो यह एक विचारणीय विषय है। यहां कृषि विकास के लिये कुछ सुझाव दिये जा रहे हैं जिस पर सरकार द्वारा ध्यान दिया जाना चाहिये –

- कृषि को उद्योग का दर्जा प्रदान किया जाय जिससे किसान अपनी फसल की कीमत का निर्धारण स्वयं कर सकें। अर्थात् समय, संसाधन एवं परिश्रम के अनुपात में मूल्य का निर्धारण किया जाय।
- जिस प्रकार विशिष्ट आर्थिक क्षेत्र उद्योगों के लिये निर्धारित किये जा रहे हैं उसी प्रकार विशिष्ट कृषि क्षेत्र का निर्धारण किया जाय और ऐसे कृषि क्षेत्रों में कृषि से सम्बन्धित समस्त संसाधन मुहैया कराये जाएं।
- कृषि भूमि का वैज्ञानिक परीक्षण कराया जाय जिससे कौन सी भूमि किस फसल के लिये उपयोगी है उस पर उसी फसल को उगाने के लिये किसान को प्रेरित किया जाए।
- कृषि की नयी तकनीकों के प्रयोग के लिये किसानों को प्रशिक्षित करने के लिये सरकार द्वारा समय–समय पर कार्यक्रम आयोजित किये जाएं।
- कृषकों द्वारा अच्छी फसल उगाने पर पुरस्कृत करने की व्यवस्था होनी चाहिए जैसा कि उद्योग क्षेत्र में किया जाता है कि कौन अपने क्षेत्र में सबसे आगे है।
- कृषकों को आसान एवं सस्ता ऋण प्रदान किया जाय। सरकार इस बात पर ध्यान दे कि कृषि का सकल घरेलू उत्पाद में जो हिस्सा है उसी अनुपात में कृषि को ऋण में हिस्सेदारी प्राप्त हो।
- कृषि उपकरणों जैसे–बीज, उर्वरक, कीटनाशक, कृषि यन्त्र एवं उपकरण, सिंचाई, भण्डारण आदि की समुचित व्यवस्था समयानुकूल किसानों के लिये की जाय। अर्थात् किसानों को फसल की बुआई के 30 दिन पूर्व यह जानकारी प्राप्त हो जानी चाहिये कि उसे सम्बन्धित संसाधन कहां प्राप्त होगा तथा फसल तैयार हो जाने के बाद उसको उचित कीमत देने वाली संस्था कौन होगी जो उसकी फसल की उचित कीमत देकर फसल को क्रय करेगी।
- चूंकि कृषि काफी हद तक प्रकृति पर निर्भर है, इसलिये प्राकृतिक आपदाओं से बचाने के लिये, साथ ही मानवीय हानि से सुरक्षित करने के लिये फसल बीमा योजना का प्रचार–प्रसार सुदूर ग्रामीण इलाकों तक में किया जाय। इसके लिये पंचायतों को भागीदार बनाया जाय।
- जिस प्रकार औद्योगिक संस्था अपनी संस्थाओं में कार्यरत कर्मचारियों के परिवारों की शिक्षा, स्वास्थ्य एवं मनोरंजन की व्यवस्था अपनी संस्था के भीतर रखते हैं उसी प्रकार कृषकों के परिवारों की अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य एवं मनोरंजन की व्यवस्था ग्रामीण इलाकों में सरकार द्वारा प्रदान की जानी चाहिये जिससे जनबल का शहरों की ओर पलायन कम किया जा सकेगा, जो कृषि विकास के लिये नितान्त आवश्यक है।
- कृषकों को इस बात के लिये प्रेरित किया जाय कि वे जो कार्य कर रहे हैं वह किसी भी दृष्टि से छोटा या महत्वहीन नहीं है, तथा इसका लाभ आने वाली पीढ़ियों को भी प्राप्त होगा जो उनकी एवं देश की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बनाने में सहायक होगा।

देश का आर्थिक विकास केवल प्रत्येक हाथ में मोबाइल ला देने से नहीं होगा। हम प्रत्येक हाथ में मोबाइल पकड़ा कर अपने देश के विकास का यदि दम्भ भर रहे हैं तो यह देश के लिये हित कर नहीं है। हम जिस सूचना क्रांति की बात कर रहे हैं, उसका महत्व तो तब है जब घर बैठा किसान अपने मोबाइल से कृषि से सम्बन्धित समस्त जानकारी प्राप्त कर सके और उससे लाभान्वित हो सके जो अभी तक दिखायी नहीं दे रहा है। सरकार कृषि क्षेत्र को प्रोत्साहन देकर न केवल कृषकों की दशा सुधार सकती है, बल्कि ग्रामीण आय में वृद्धि लाकर मांग और पूर्ति के बाजार तंत्र को गति प्रदान कर सकती है। ग्रामीण आय में वृद्धि ही औद्योगिक उत्पाद की खपत को बढ़ा सकता है जो विकास की प्रक्रिया का महत्वपूर्ण हिस्सा है। अतः स्थायी आर्थिक विकास के लिये कृषि में वृद्धि और स्थिरता दोनों प्राप्त करना अनिवार्य है।

(लेखक हरीशचन्द्र स्नातकोत्तर महाविद्यालय में रीडर हैं।)
ई–मेलः apskalhans@yahoo.co.in
हरिश्चन्द्र स्नातकोत्तर महाविद्यालय, वाराणसी

मानसून की माया : कहीं धूप-कहीं छाया

राधाकांत भारती

मई–जून में गर्म हवा और अधिक तापमान से समस्त जीवधारी व्याकुल हो उठते हैं। किंतु इस कष्टदायक ताप में ही वर्षा की शीतल फुहार का रहस्य छिपा है। प्रकृति की ऐसी विचित्र स्थिति में महासागर से जल वाष्प लेकर तेज हवाएं धरती पर बहने लगती है। प्रति वर्ष भारतीय उपमहाद्वीप में मानसून, पवन के सृजन और बहाव की यह घटना दुहराई जाती है। बरसात लाने वाली हवा और मानसून की प्रतीक्षा भारतवासी कितनी आतुरता से करते हैं, यह बात जून–जुलाई में प्रकाशित होने वाले मौसम संबंधी समाचारों से स्पष्ट होती है। तब मानसून के आगमन और वर्षा संबंधी समाचारों को विशेष महत्व दिया जाता है।

मानसून का प्रारंभ

गर्मी के कारण एशिया महाद्वीप के मध्यदेशीय इलाके में निम्नभार की स्थिति आ जाती है। फलस्वरूप दक्षिण के उच्च वायु भार वाले सागरीय क्षेत्र से हवा का तेज बहाव एशिया के मध्य में स्थित निम्न वायु भार की ओर हो जाता है। इस तरह से मानसून का बहना आरंभ होता है जो हिन्द महासागर के सुदूर दक्षिणी भाग (आस्ट्रेलिया और मालागासी के मध्य का सागरीय भाग) से चलकर उत्तर पूर्वी दिशा में बहता हुआ एशिया के दक्षिण–पूर्वी भाग में पहुंचता है।

महासागर की अगाध जल राशि पर बहुत दूर तक बहते रहने के कारण ये हवाएं जलापूरित होती हैं और बादलों की विशाल राशि लेकर प्रायद्वीपीय भारत को अपना पहला निशाना बनाती हैं। केरल के पश्चिमी सागर तट से और फिर बंगाल की खाड़ी प्रदेश में सुंदरवन के निकट ये हवाएं थल क्षेत्र में प्रवेश करती है। बादलों से भरी यह हवा भारी मात्रा में जलराशि लेकर तप्त भूभाग के ऊपर फैले आसमान में एकदम छा जाती है।

जलवायु विज्ञान के भौतिक सिद्धांतों के अनुसार गर्म भूमि के ऊपर उष्ण हवा की तह के संपर्क में आने पर ताप की विषमता से मेघपूर्ण हवाओं में हलचल होने लगती है। इसकी वजह से उनमें चक्रवातीय आंदोलन पैदा होने लगता है जिससे झंझावात और गर्जना के साथ मौसम की वर्षा की पहली बूंद प्यासी धरती पर गिरती है और भारत भूमि पर बरसात की शुरुआत होती है।

अनिश्चित समय

महासागर के आंदोलित वक्षस्थल के ऊपर आकाश में उठकर तप्त धरती पर बरसने वाली मानसून हवायें तेज गति और गर्जना के साथ ही अपनी मतवाली चाल के लिए भी मशहूर हैं। इसके आगमन का समय और इससे विभिन्न क्षेत्र में होने वाली वर्षा की मात्रा का 70 प्रतिशत से अधिक दक्षिण पश्चिम मानसून से प्राप्त होता है, परंतु इस दक्षिण पश्चिम मानसून का प्रभाव चार महीनों तक पूरे जोर शोर से रहता है। ऐसा अनुमान है कि पश्चिमी तट के निकट महाबलेश्वर में 500 घंटे, बेंगलूर में 400, मुंबई में 300 तथा त्रिवेन्द्रम में मात्र 110 घंटे, वर्षा होती है। एक ही क्षेत्र के विभिन्न स्थानों में एक ही साल में ऐसी विभिन्नता मानसून की वर्षा की असमानता का

मानसून की पहली फुहार–मौसम हुआ खुशगवार

उदाहरण है। यही नहीं दूसरे वर्ष इस मात्रा में पुनः अंतर आने की पूरी संभावना बनी रहती है। फिर भी सामान्यतः इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि दक्षिण पश्चिम मानसून से भारत में पश्चिमी तट से हिमालयी इलाके तक चार महीने की अवधि में बरसात का मौसम कायम रहता है और थोड़ी वर्षा बराबर होती रहती है जिसके द्वारा खेती–बाड़ी का काम चलता रहता है।

बरसात और तूफान–गंगा में उफान

मानसून की विचित्रता

मानसून की विचित्रता का एक पहलू यह भी है कि विभिन्न स्थानों पर वर्षा की मात्रा में कमी–बेशी जरूर होती है, किन्तु संपूर्ण देश को मिलने वाली कुल वर्षा की राशि प्रायः समान रहा करती है। इसका अर्थ यह है कि कहीं पर वर्षा की मात्रा कम होने का कारण दूसरे क्षेत्र में होने वाली अधिक वर्षा है। फलस्वरूप प्रत्येक वर्ष बरसात के मौसम में किसी प्रदेश में वर्षा न होने के कारण सूखा पड़ने से हाहाकार मचता है, तो दूसरी ओर अधिक वर्षा से नदियों में बाढ़ आ जाती है, खेत–गांव डूब जाते हैं। मानसून के द्वारा कहीं अतिवृष्टि तो कहीं अनावृष्टि का यह उलट–फेर जनसामान्य के लिए हानिकर है। इससे भारत में यह कहावत प्रचलित है, यहां कृषि मानसून की वर्षा का एक खेल है।

मानसून का आगमन जब देर से होता है तब वर्षा की मात्रा अपेक्षाकृत कम होती है। देर से पहुंचने पर आरंभ में वर्षा धीरे–धीरे होती है, फिर अचानक भारी वर्षा हो जाती है। फसलों पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, किंतु भारतीय कृषि के लिए मानसून की इस मार को सहने के अलावा और कोई दूसरा रास्ता नहीं है। देर से वर्षा होने की वजह से फसल पीछे हो जाती है फिर अचानक अधिक वर्षा हो जाने पर लगी फ़सलों के खराब हो जाने या बह जाने का खतरा बना रहता है। सामान्यतः जुलाई–अगस्त का महीना मानसून के लिए सबसे अधिक महत्व का समय है। इन दिनों मानसून भारत पर पूर्ण रूप से छाया रहता है। दक्षिण में वृष्टि छाया के क्षेत्र तथा पश्चिम के मरुप्रदेश को छोड़कर शेष संपूर्ण भारत में बरसात रहती है।

भारतीय उपमहाद्वीप में मानसूनी वर्षा को नियंत्रित करना अभी संभव नहीं हो पाया है, लेकिन हमारे मौसम वैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रकार के उपकरण तथा उपग्रहों की सहायता से मानसून तथा उससे होने वाली वर्षा का अनुमान लगा सकने में सफलता प्राप्त की है। यदि समय से पहले वर्षा या तेज हवा की खबर मिलती है तब किसान अपनी फसलों को सुरक्षित रखने का प्रयत्न कर सकता है। भारत का मौसम विज्ञान विभाग इस समय किसानों को मौसम के पूर्वानुमान संबंधी जानकारियां देने के लिए प्रयत्नशील है। इस साल मानसून पवन के जल्द आगमन से अच्छी वर्षा की उम्मीद है।

(लेखक अनुसंधानकर्ता और पत्रकार हैं)
ई–मेलः rkbharati@hotmail.com
पता–56, नागिन लेक अपार्टमेंट, पीरागढ़ी, नई दिल्ली–87

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड-4, तल-7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	550 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	750 रुपये (वार्षिक)

जामुन एक उपयोगी भारतीय फल

ईशानदेव

भारतीय मूल का वृक्ष जामुन, औषधियों से युक्त पोषक तत्वों का श्रेष्ठतम् स्रोत है। इसके स्वादिष्ट फल के अलावा इसकी छाल, गुठली, पत्तियां, लकड़ी और फूल सभी के गुणकारी उपयोग हैं। इसमें पाये जाने वाले औषधीय गुणों का वर्णन प्राचीन एवं आधुनिक दोनों युगों के वैज्ञानिकों ने किया है। इसमें पाये जाने वाले उपयोगी तत्वों के कारण ही प्राचीन भारतीय चिकित्सा मनीषियों ने आयुर्वेद ग्रन्थों में इसकी विशेषताओं का पर्याप्त वर्णन किया है। प्रमुख आयुर्वेदिक ग्रन्थ "राजनिघण्टू" में इसे मधुर, कषाय, सत्व वाला बताया गया है। सूखे गले को राहत देने वाला, शरीर के सोथ, आंत्रकृमि स्वांस, अतिसार, खांसी, कफ विकृति, उदर शूल का निवारक एवं पाचन शक्ति को बढ़ाने वाला बताया गया है। भारतीय चिकित्सा शास्त्र आयुर्वेद के प्रणेता महर्षि सुश्रुत ने जामुन के विषय में लिखा है कि यह पित्त रोगों से मुक्ति पहुंचाने वाला, शरीर की जलन से छुटकारा दिलाने वाला तथा स्त्रियों के योनि जनित रोगों से मुक्ति में गुणकारी औषधि का काम करता है। जामुन के सेवन से शरीर के सौंदर्य और आकर्षण में वृद्धि होती है। आधुनिक वनस्पति वैज्ञानिकों ने भी अपने शोध में इसे अत्यन्त पौष्टिक पाया है। आधुनिक युग में जामुन में पाये जाने वाले तत्वों के विश्लेषण में इसके प्रति 100 ग्राम गूदे में 84 ग्राम पानी, 14 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 15 मिली ग्राम कैल्शियम, और 15 मिली ग्राम फास्फोरस, 0.7 ग्राम प्रोटीन, 0.3 ग्राम वसा पाये जाने की घोषणा की है। इसी क्रम में 100 ग्राम जामुन के रस में 80 मिली विटामिन सी की उपस्थिति पायी गयी है। जामुन के गूदे में रिबोफलोविन और नियासिन जैसे उपयोगी विटामिन भी पाये जाते हैं। विशेषज्ञों के अनुसार 100 ग्राम जामुन के गूदे से 62 कैलोरी ऊर्जा की प्राप्ति होती है। वर्तमान युग में जामुन गरीब–अमीर सबके लिये समान रूप से सुलभ और उपयोगी है। पिछले वर्ष जब एक अमेरिकी कम्पनी ने जामुन, बैंगन और करेले को मिलाकर मधुमेह रोग के उपचार के लिए एक औषधि का पेटेन्ट कराया तब हमारे देश में इस बात को लेकर खूब हो–हल्ला मचा कि सैकड़ों वर्षों से मधुमेह के इलाज में प्रयुक्त होने वाले इस फल का भारत की ओर से अब तक पेटेन्ट क्यों नहीं कराया गया।

सड़क की शोभा बढ़ाते हुए जामुन के छायादार वृक्ष

जामुन से प्राप्त उपयोगी पदार्थ

जामुन के फल से अनेक उपयोगी और गुणकारी पदार्थ बनाये जाते हैं। इससे जैम, जेली, शर्बत व अचार बनता है। जामुन की गुठलियों के चूर्ण से मधुमेह एवं उदर विकार का इलाज होता है। जामुन की गुठलियों से तेल भी निकाला जाता है। इसकी गुठली से प्राप्त एल्कोहलिक तत्व से भी मधुमेह के रोगियों का इलाज होता है। जामुन के वृक्ष की छाल से बने सत्व का प्रयोग माउथ वॉस के रूप में किया जाता है। जामुन खाने से दांतों और मसूड़ों को सुरक्षा मिलती है। इसमें पाये जाने वाले फास्फोरस से स्मरण शक्ति का विकास होता है। जामुन का वृक्ष छायादार, टिकाऊ और लम्बी उम्र वाला होता है। इसमें रोग बहुत कम लगते हैं जिसके कारण प्राचीन काल से ही सड़कों के किनारे छाया प्रदान कर पथिकों को राहत पहुंचाने के लिए व्यापक रूप से इसके वृक्ष लगाये जाते रहे हैं। इसकी लकड़ी पर पानी का प्रभाव बहुत कम पड़ता है। यह पानी में शीघ्र खराब नहीं होती, यही कारण है कि कुएं के निर्माण के समय नीचे के पानी वाले हिस्से में इसका प्रयोग किया जाता है।

पर्यावरणीय दृष्टि से जामुन के वृक्ष का कम महत्व नहीं है। यह कंकड़ीली, पथरीली, ऊसर, बंजर और नम जमीन में भी आसानी से उगाया जा सकता है। इसका वृक्ष लम्बी आयु वाला टिकाऊ होता है। इसकी पत्तियां घनी और पर्याप्त छाया देने वाली होती है। इसे नदियों, तालाबों, नहरों की कटाव वाली भूमि पर उगाया जा सकता है। इसे उगाने के लिए कम से कम श्रम

और देखभाल की जरूरत पड़ती है।

जामुन की विशेषता एवं अन्य उपयोग

जामुन मूलतः मिंटेसी कुल के सीजीजियम परिवार का वृक्ष है। लौंग जैसी उपयोगी वनौषधि भी इसी परिवार में आती है। जंगलों में प्राकृतिक रूप से उगने वाले जामुन के वृक्षों को वानस्पतिक जगत में "सीजीजियम फ्रूटीकोसम" कहा जाता है। इसका फल छोटा, कसैला, कम गूदे वाला और बड़े बीज से युक्त होता है। बागों में फल के लिए उगाये जाने वाले जामुन को बोल–चाल की भाषा में गुलाब जामुन और वैज्ञानिक भाषा में "सीजीजियम जामोंस" कहा जाता है। इसके फल बड़े, गूदेदार, स्वादिष्ट, मीठे होते हैं। इसकी मिठास के कारण इसके फल पर मधुमक्खियां खूब लगती हैं। मधुमक्खी पोषकों के लिए जामुन का वृक्ष अत्यन्त उपयोगी है। इसके फूलों का रस चूस कर मधुमक्खियां भारी मात्रा में शहद बनाती हैं। जामुन के वृक्षों के आस–पास पाली गयी मधुमक्खियों से इसके फूल के मौसम में शहद की भारी मात्रा मिलती है। जामुन के फूलों से प्राप्त शहद का रोगोपचार में भी विशेष महत्व है। प्राचीन भारतीय आयुर्वेदिक ग्रन्थों में जामुन को शुकप्रिया, श्यामला, प्रभूति, सुरभि पात्रा, राजफल, नीलफल और महास्कन्धा आदि नामों से पुकारा जाता है। भारत के विभिन्न प्रान्तों में जामुन को अलग–अलग नामों से पुकारा जाता है, जैसे–गुजरात में जामू, जम्बू और जामड़ी, कन्नड़ में नीरालय, तमिल में नागा, पंजाम, उड़िया में जामूकोलि, जोबावा, बंगाल में कालीजाम और जामगाध के नामों से सम्बोधित किया जाता है। जामुन के वृक्ष में पतझड़ के बाद नई पत्तियों के साथ ही फूल भी आते हैं। ग्रीष्म ऋतु में इसमें फल लगते हैं जो परिपक्व होकर वर्षा ऋतु (जून, जुलाई) में पक कर तैयार हो जाते हैं और बाजार में खूब मिलते हैं।

विटामिन–सी से भरपूर मीठे जामुन

रोगोपचार में जामुन का उपयोग

- जामुन खाने से पित्त विकृति से होने वाला दस्त रुक जाता है।
- जामुन की गुठलियों का 3–3 ग्राम चूर्ण सुबह शाम जल से लेने पर स्वप्नदोष की शिकायत दूर हो जाती है।
- जामुन और आम की गुठलियों के बराबर मात्रा में मठ्ठे के साथ लिये गये चूर्ण से पेट का शूल नष्ट होता है।
- जामुन और आम की गुठली के चूर्ण में सेंधा नमक मिलाकर जल के साथ दिन में दो से तीन बार लेने पर दस्त से मुक्ति मिल जाती है।
- जामुन और आम के फल के रस को समान मात्रा में मिलाकर सेवन करने से मधुमेह रोग में लाभ होता है।
- जामुन, आम और आंवले के पत्ते के रस की 10–10 ग्राम मात्रा को 50 ग्राम बकरी के दूध में मिलाकर लेने से रक्तातिसार में लाभ होता है। रसों और दूध के इस मिश्रण में शहद मिलाकर लेने से मिश्रण की उपचारक क्षमता और बढ़ जाती है।
- जामुन और आम की पत्तियों का समान मात्रा का रस दिन में दो से तीन बार पिलाने से बच्चों का दस्त ठीक हो जाता है।
- जामुन और करेले की पत्तियों से निकाला गया 5–5 ग्राम रस और 2 ग्राम विजय सार का चूर्ण आपस में मिलाकर कुछ सप्ताह सेवन करने से मधुमेह में लाभ मिलता है।
- जामुन की गुठलियों के चूर्ण की 3–3 ग्राम मात्रा सुबह शाम मठ्ठा के साथ लेने पर गुर्दे की पथरी से धीरे–धीरे मुक्ति मिल जाती है।
- जामुन का फल खाने से रक्ताल्पता (खून की कमी) और कामला रोगों से मुक्ति मिल जाती है।
- जामुन के मुलायम पत्तों के रस में शहद मिलाकर सेवन करने से तीव्र अतिसार भी रुक जाता है।
- जामुन का फल खाने से रक्त मुक्ति विकृति का निवारण हो जाता है और फोड़े–फुंसी से मुक्ति मिल जाती है।
- जामुन के फलों के 30 ग्राम रस में 10 ग्राम गुलाब जल मिलाकर लेने से वमन विकृति का निवारण हो जाता है।
- जामुन का फल खाने से पित्त विकार जनित दस्त से मुक्ति मिल जाती है।
- जामुन की छाल से बने काढ़े में शहद मिलाकर प्रतिदिन सुबह लेने से श्वेत प्रदर से मुक्ति मिल जाती है।
- जामुन की छाल को उबाल कर कुल्ला करने से मुंह के छाले नष्ट हो जाते हैं।
- भोजन के बाद जामुन का फल खाने से पाचन क्षमता का विकास होता है और कब्ज से निजात मिल जाती है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार एवं लोकोत्थान समिति से सम्बद्ध हैं।)
श्री विश्वनाथ मन्दिर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी–221005

RAU'S IAS

A name that Nation trusts

Amazing Success

Our Last Exam Results : Nine positions secured by our students in first 20 and 49 in first 100 with overall 203 total selections. As regards the past achievements, Study Circle has contributed nearly one-third of the total selections done for Civil Services by UPSC since 1953.

It is a well known fact that Rau's is the most trusted and recommended name all over the country for IAS & PCS coaching.

Unbeatable Strategy

Answers that matter : The most crucial fact about coaching is that it should improve the quality of your answers in the minimum possible time. It is precisely this training on which we focus on at Rau's to give an extra edge to the answers you give / write in the Civil Services Examination.

Be Sure

We have no branches or associates any where in India except Jaipur. Our name which has become a legend among students for the highest standards in teaching, and hence has been copied by a lot of people across India, but no one can match our quality.

Programme Highlights

Civil Services/PCS Exam - 2008

- Personal Guidance (English Medium) is available for -
  General Studies/ Essay, History, Sociology, Public Administration, Geography, Psychology, Law & Commerce.
- पर्सनल गाइडेंस (हिन्दी माध्यम) -
  सामान्य अध्ययन / निबंध, इतिहास, समाजशास्त्र भूगोल एवं लोक प्रशासन में उपलब्ध।

  Postal Guidance in English Medium available for -
  General Studies, History, Sociology, Public Administration and Geography.
- पोस्टल गाइडेंस (हिन्दी माध्यम) -
  केवल सामान्य अध्ययन, भारतीय इतिहास एवं भूगोल में उपलब्ध।
- Hostel facility arranged.

कोई भी लक्ष्य बड़ा नहीं ।
जीता वही जो डरा नहीं ।।

If you are taught by the stars, sky is the limit.

New batches for 2008 Exam, start from 1st June, 2007

Admission Open, Apply Now.

Contact personally or write for prospectus with a DD/MO of Rs. 50/- favouring

RAU'S IAS STUDY CIRCLE

Head Office : 309, Kanchanjunga Bldg., 18, Barakhamba Road, Connaught Place, New Delhi-110001
Phone : 011-23317293, 23318135-36, 23738906-07, 32448880-81, 65391202, Fax: 23317153

Jaipur Centre : 701, Apex Mall, Lal Kothi, Tonk Road, Jaipur - 302015, Ph.: 0141-6450676, 3226167, 9351528027

For full details on fast-track log-on our website: www.rauias.com

The Original Rau's - Since 1953

KH-08/07/01

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)-05/3164/2006-08
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)-55/2006-08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2006-08
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

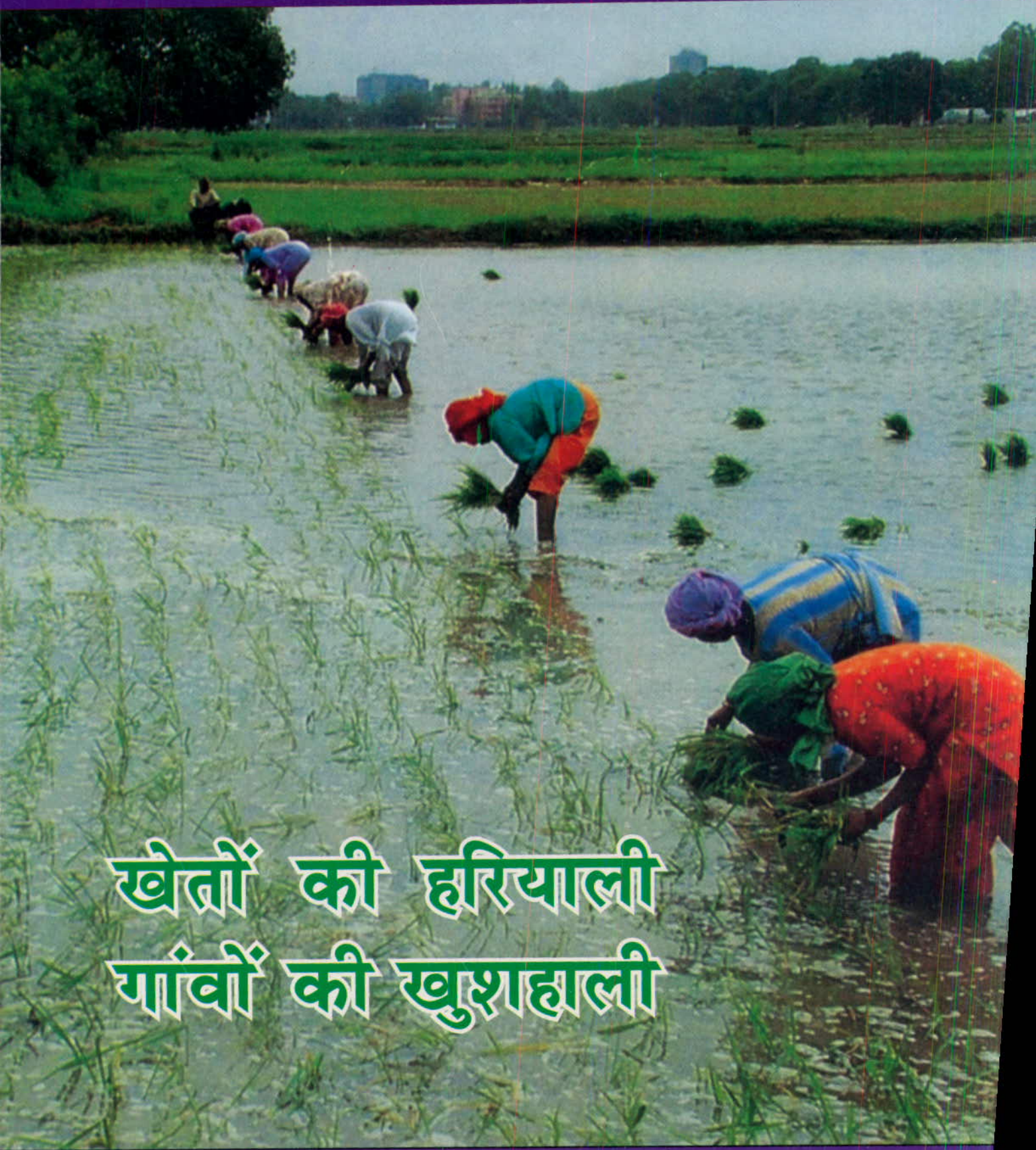

खेतों की हरियाली
गांवों की खुशहाली

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : प्रभारी संपादक : कैलाश चन्द